सिरि संवेगरंग साला

कर्ता - नवांगी टीकाकार अभयदेवसूरि म. के गुरुभाई श्री जिनचंद्रसू. म. सा.

★ मंगलाचरण, प्रयोजनादि 1-19

→ ऋषभदेवादि, महावीर स्वामी, गणधरों, उपाध्याय, मुनि, सर्वज्ञ वाणी, प्रवचन, गुरु, गृहस्थ, आराधना, श्रुतदेवी, निजगुरु की स्तुति।

★ धर्म दुर्लभता 20-29

→ संसार में मनुजत्व, सुकुलादि, सर्वज्ञधर्म को प्राप्त कर आत्महित ही करना चाहिए।

★ आराधना का महत्त्व 30-33 → हित एकांत से मोक्ष में, मोक्ष कर्मक्षय से, कर्मक्षय आराधना से। सम्यक् आराधना शास्त्र बिना नहीं होती इसलिए मैं सुप्रशस्त आराधना शास्त्र कहूँगा।

★ आराधनाधिकारस्वरूप 34-55 → आराधना इच्छते हुए व्यक्ति को सबसे महत्वपूर्ण त्रिकरण (मन, वचन, काया) का निरोध करना चाहिए क्योंकि उसका निरोध न होने पर ऐसा कौन सा अशुभ है, जो जीव नहीं करता। वह निरोध प्रशस्त ग्रंथों के अर्थचिंतन और रचनादि से ही होता है। इस प्रकार महात्मा को ही प्रस्तुत प्रबंध से उपकार होता है। जिस शास्त्र में संवेग-निर्वेद का वर्णन है, वही श्रेष्ठ है। इसलिए पंडितों द्वारा संवेगादि हितार्थ के देशक शास्त्र के श्रवण और भावन में प्रयत्न किया जाना चाहिए। ऐसे शास्त्रों का श्रवण धन्य जीवों को होता है, श्रवण होने पर भी शमरस की प्राप्ति धन्यतर को ही होती है। दीर्घकाल तक आचरित चारित्र का सार संवेगरस का स्पर्श है। यह संवेग संसार से भीरुत्व अथवा मोक्षाभिकाङ्क्षित्व है।

★ ~~इसलिए भ~~ रचना प्रयोजन - इसलिए भव्य जीवों को गुरु से वचन रूप द्रव्य प्राप्त कर आराधना रूप रसायन शुरु करना। इस प्रकार आराधना रूप चांदनी में रहे जीव रूप शशिकांत मणि से सतत पाप रूप पानी झरता है। इस ग्रंथ 'संवेगरंगशाला' के विशेषण (59-65)। मेरा यह आरंभ मात्र पर के उपकार के लिए है। यह आराधना गुणनिष्पन्न ऐसे 'संवेगरंगशाला' नाम से कही जाएगी। यहाँ जिस प्रकार वह आराधना नवदीक्षित महासेन राजा द्वारा पूछी गई और गौतम स्वामी द्वारा कही गई, जिस प्रकार आराधना कर वह राजा निर्वाण प्राप्त करेगा, उस प्रकार कही जाती

आराधना को एकाग्रचित्त वाले तुम सुनो।

* नगरीवर्णन - 77-90 - कच्छ देश, श्रीमाला नगरी।

* राजा का वर्णन 91-108 - महसेन राजा, कनकवती रानी, जयसेन पुत्र, धनंजय, जय - सुबंधु वि. मंत्री

* राजा की क्रीडा का वर्णन 109-115

* एक बार कंचुकि ने कहा कि एक पुरुष कनकवती का हरण कर लेजा रहा है। राजा उससे लड़ता है, हारता है। फिर वह देव असली रूप में कहता है कि मैं तो देव हूँ प्रतिबोध के लिए आया हूँ।
पूर्वभव - (1) यमुना नदी किनारे हाथी - शबर युवक द्वारा मारा गया।
(2) गंगा नदी किनारे हिरण - यूथपति द्वारा मारा गया।
(3) ब्राह्मण - यज्ञ में होम के लिए आए हुए एक घोड़े द्वारा जातिस्मरण ज्ञान से यज्ञ को पाप समझकर यज्ञ करने वालों ~~मुझे~~ तू मारा गया।
(4) प्रथम नरक में - नरक दुःख वर्णन (231-255)
(5) गरीब कुल में - दुःखी होकर दीक्षा ली।
(6) जंबूद्वीप x भरतक्षेत्र x वैताढ्य पर्वत x रथनुपूर नगर x चंडगति पिता - विद्युन्मती माता x कुलिशवेग विद्याधर x हेमप्रभ विद्याधर पुत्री सुरसुंदरी को देखा x रात्रि में संकेत से पहुँचा x उसे पूछा - तू विवाहित है किंतु तुने सुख क्यों नही भोगा x वह बोली - कनकप्रभ विद्याधर से मेरा विवाह हुआ किंतु उसे दाह ज्वर हुआ, सभी उपाय निष्फल गए, उसने संकल्प किया कि वह सुबह दीक्षा लेगा x दाह ज्वर ठीक हुआ x उसने दीक्षा ली x यह सुन कुलिशवेग को भी वैराग्य हुआ x वह सुरसुंदरी को उपदेश देकर वहाँ से निकला x उद्यान में मुनि को देखा x धर्ममार्ग समझकर दीक्षा ली x सौधर्म देवलोक में देव बना (273-356)
(7) देवभव - सुरसुंदरी भी उसकी देवी बनी x मेरे साथ (जो देव पूर्वभव कह रहा है वह) मैत्री हुई। वह मित्र के साथ केवलि भ. के पास गया। पूर्व भव और आगामी भव पूछे। आगामी भव में प्रतिबोध करने का मित्र देव को कहा। वह मित्र देव मैं हूँ।
(8) महसेन राजा।
फिर वह राजा महावीर प्रभु नगर में आने पर जयसेन को राज्य पर स्थापित करता है।

* विषयुक्त अन्न के लक्षण (471-480) - (1) थोड़ा अन्न अग्नि में डालने पर धूआँ नीला होता है, अग्नि की स्पष्ट आवाज होती है (2) अन्न पर लगे मक्खी वि. मरते हैं; (3) वह अन्न जल्दी ठंडा, चिकना, विपरीतवर्ण वाला नहीं होता। विषयुक्त पानी की आभा काली होती है। विषयुक्त दहि की आभा श्याम होती है। विषयुक्त दूध के बीच में लाल रेखाएँ होती हैं। विषमिश्रित सभी आर्द्रद्रव्य म्लान हो जाते हैं, सभी शुष्क द्रव्य विपरीत वर्णवाले होते हैं तथा खर और मृदु गुण विपरीत हो जाते हैं। विषयुक्त कपड़े प्रभामंडलरहित और मैले होते हैं।

राजा दीक्षा लेता है। भगवान का निर्वाण होता है। वह गौतमस्वामी के पास जाकर आराधना का स्वरूप पूछता है। (515 आसपास)

★ आराधना स्वरूप - आराधना चतु:स्कंधा ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप।
(587 से 622)

ज्ञानाराधना - काल में सूत्रपठन, विनय-बहुमान-उपधान पूर्वक, सूत्रार्थ को अन्यथा न करना, एकाग्रता से वाचना पृच्छा परावर्तना प्ररूपणा अनुप्रेक्षा, ज्ञानी पुरुषों की भक्ति बहुमान।

दर्शनाराधना - नि:शंकत्व, कांक्षा रहित, अनुष्ठान फल में नि:संदेह, जुगुप्सा न करना, धार्मिक के गुण की उपबृंहणा, प्रवचन प्रभावना, दर्शनी पुरुष में भक्ति बहुमान।

चारित्राराधना - सावद्य योग त्याग, 5 महाव्रतों में, 10 यतिधर्म में प्रवृत्ति, 10 विध सामाचारी की आसेवा, वैयावृत्य-ब्रह्मचर्यगुप्ति-पिंड विशुद्धि-गुप्ति-समिति-अभिग्रह-इंद्रिय जय-कषाय निग्रह में प्रवृत्ति, 12 भावना-25 भावना-4 भावना भाना, 12 प्रतिमा-परिहार विशुद्धि आदि स्वीकारना, चारित्री पर भक्ति-बहुमान।

तप आराधना - मन में खेद-देह बाधा-इंद्रिय विकलता-धातु को चयापचय-संयम गुणों की परिहानि न हो इस प्रकार 12 भेद में प्रवृत्ति।

संक्षिप्ताराधना स्वरूप - (भावना स्वरूप) अरिहंत सिद्धों को वंदन करना, मिथ्यात्व छोड़ना, सम्यक्त्व स्वीकारना, मैत्री वि. 4 भावना, सभी जीवों को खमाना, राग छोड़ना, आहार त्याग करना, सद्ध्यान में लीन रहना (625-640)। इस आराधना में मधु राजा और सुकोशल मुनि के दृष्टांत। (640-707)

eg. मधुराजा - मथुरापुरी × मधुराजा × परमसम्यग्दृष्टि × क्रीड़ा के लिए उद्यान में गया × शत्रुंजय शत्रुराजा द्वारा घेरा गया × वहाँ से हाथी पर भागा × संक्षेप में आराधना कर 3रे देवलोक में देव हुआ।

सुकोशल मुनि - साकेत पुर × कीर्तिधर राजा × सहदेवी रानी × सुकोशल पुत्र × कीर्तिधर ने दीक्षा ली × विहार करते हुए कभी नगर में आए × रानी द्वारा देखे गए × पुत्र दीक्षा न ले इस भय से नगर से बाहर निकाले गए × पुत्र को धात्री मां से खबर पड़ी × वह जंगल में मुनि के पास जाकर दीक्षा लेता है × रानी आर्तध्यान से मरकर मोग्गिल्ल गिरि पर व्याघ्री बनी × दोनों मुनि ने वहाँ से चातुर्मास के बाद विहार किया × व्याघ्री पूर्व वैर से मारने दौड़ी × दोनों मुनि ने सागार अनशन किया × व्याघ्री ने सुकोशल मुनि को मारा × मुनि ने संक्षिप्त आराधना की - धर्म दुर्लभता विचारी, स्कंधाचार्य का ध्यान किया × स्वयं को व्याघ्री के कर्म बंध का निमित्त माना × अंत:कृत् केवली होकर मोक्ष गए।

★ आराधना स्वरूप का विस्तार - 4 मूल द्वार 1. परिकर्म विधि 2. परगण संक्रमण 3. ममत्व उच्छेद 4. समाधिलाभ / 4 चारों के क्रमश: 15, 10, 9, 9 प्रतिद्वार / (710-11)

मरण समय की आराधना और जीवन पर्यंत आराधना का महत्त्व - क्रमश: मरुदेवी और क्षुल्लक का दृष्टांत (722-804)

→ आराधना के पहले जीव को आत्मा का परिकर्म करना चाहिए। परिकर्म विधि में 15 प्रतिद्वार

(i) अर्ह = आराधना के योग्य - राजद्रोह-मंत्री द्रोह-मित्र द्रोह न करने वाला, विरुद्ध संसर्ग का त्याग करने वाला, साधुओं का भक्ति-बहुमान करने वाला, रोज मृत्यु का विचार करने वाला, साधर्मिकों पर वात्सल्य करने वाला, आराधना की दुर्लभता विचारने वाला, गुण दृष्टि वाला, प्रमाद छोड़ने वाला, इंद्रियजय करने वाला, कषायरहित मन वाला इत्यादि (810-832)। आराधना की योग्यता में वंकचूल और चिलातिपुत्र के दृष्टांत।

eg. वंकचूल दृष्टांत → (839-1131) - श्रीपुर नगर × विमलयश राजा × सुमंगला रानी × पुष्पचूल-पुष्पचूला जुड़वा भाई-बहन × नगर में अनर्थ करने से वंकचूल नाम पड़ा × नगर से निकाला × भिल्लों की पल्ली में पहुँचा × आचार्य आए × शिष्यों को कहा चातुर्मास के लिए वसति ढूँढो × शिष्य ने वंकचूल को पूछा × पहले मना कि यहाँ चोरी-मांस मद्यपान होता है, आपके योग्य नहीं है × पुन: पूछने पर 'धर्मकथा नहीं करना' शर्त पर वसति दी × वंकचूल ने पल्ली के लोगों को 4 महिने मद्य-मांस छोड़ने को कहा, जिससे गोचरी का लाभ मिले × चातुर्मास के बाद वह आचार्य को सीमा तक छोड़ने गया × 'सीमा के बाहर धर्मकथा करूँ' ऐसा वंकचूल को पूछा × वंकचूल ने 'जाते-जाते कितना कहेंगे' ऐसा सोचकर हाँ कही × श्रुतज्ञान के उपयोग से 4 नियम दिए -
① सात-आठ कदम पीछे हटकर घात करना ② अज्ञात फल न खाना ③ राजा की रानी के साथ मैथुन न करना
④ काक-मांस नहीं खाना × एक बार सार्थ को लूटने गया किंतु अपशकुन से सार्थ ने मार्ग बदल दिया,

खाली हाथ वापस आए, रास्ते में भूख लगी, साथियों ने किंपाकफल खाए, मर गए x अर्धरात्री में अकेला घर आया x पत्नी को पुरुष के साथ सोता हुआ देखा x मारने से पहले 7-8 कदम पीछे गया तो पीछे टकराया x आवाज से बहन जागी x आचार्य श्र. को याद किया x वहाँ नट आए थे, नाटक में वह पल्लीपति का वेश पहनकर बैठी थी x एक बार अकेला उज्जयनी नगरी गया x एक महल में घुसा, वहाँ कलह सुना तो सोचा जिस घर में महिलाओं का कलह होता है, वहाँ धन नहीं होता, वहाँ से बाहर निकला x देवदत्ता वेश्या के घर गया, वेश्या कुष्ठी के साथ सोई थी, उसने सोचा यह कितनी तुच्छ है जो इतना धन होते हुए भी कुष्ठी के साथ सोई है और मैं भी कितना तुच्छ हूँ जो इसका धन लेने आया, वहाँ से निकल गया x एक बड़ी हवेली में गया, वहाँ पिता पुत्र को 20 कोड़ी के लिए घर से बाहर जाने को कहता है, यह सुनकर वह सोचता है यदि इसका धन चोरूँगा तो कंजूस मर जाएगा, वहाँ से बाहर निकल गया x वह सोचता है अब राजमहल में जाऊँगा और यथेच्छ धन लूँगा x जंगल से एक गोधा को पकड़कर लाया x राजमहल के पीछे की दीवाल पर गोधा की पूंछ पकड़ चढ़ गया x अंदर रानी बैठी थी, वह राजा पर गुस्सा थी x सुबह का थोड़ा-थोड़ा उजाला होने से रानी ने इसे देखा और भोग की प्रार्थना की x उसने पूछा तू कौन है, वह बोला मैं चोर हूँ x रानी बोली पहले मेरे साथ भोग भोगो फिर यथेच्छ धन दूँगी x उसने पूछा तुम कौन हो, वह बोली मैं रानी हूँ x वह बोला तू मेरी माता समान है x रानी उसे पकड़वा लेती है x राजा रानी को मनाने आया हुआ परदे के पीछे सब सुनता है x सुबह राजसभा में राजा उसे बार-बार पूछता है किंतु वह सही बात नहीं बताता है x उसे महान् मानकर राजा सेनापति बनाता है x एक दिन दमघोष आचार्य आते हैं x उनसे धर्म सुनकर वह श्रावक बनता है x जिनदास श्रावक के साथ उसकी मैत्री होती है x एक बार वह कामरूप राजा के साथ युद्ध करता है x कामरूप को जीतकर वह उज्जयिनी आता है किंतु वह घायल होता है x वैद्य उसे कौए का मांस खाने को कहते हैं x वह मना करता है x राजा समझाने के लिए जिनदास को बुलाता है x जिनदास को आते हुए रास्ते में दो देवी रोती हुई मिलती हैं x पूछने पर कहती है, यह वंकचूल मरकर हमारा सौधर्म देवलोक में नाथ बनने वाला है, यदि आपके समझाने से वह मांस खाएगा तो दुर्गति में जाएगा, अतः हम रो रही हैं। जिनदास वंकचूल को समझाता है किंतु वह नहीं मानता है x अंत में मुनि को बुलाकर उसे निर्यामणा कराते हैं x वह 12वें देवलोक में जाता है x जिनदास को वापस आते हुए वे देवी रोती हुई मिली x पूछने पर कहती है- वह तो हमसे भी ऊपर 12वें देवलोक में गया है, हम तो नाथरहित होने से रोती हैं।

eg. चिलातिपुत्र → (1132-1167) भूमिप्रतिष्ठित नगर x यज्ञदेव ब्राह्मण x जिनधर्म द्वेषी x 'जो हारे वह दूसरे का शिष्य बने' इस शर्त पर वाद करता है x जैन मुनि से हारा और दीक्षा ली x एक बार दीक्षा छोड़ता था तभी एक देवी ने निषेध किया, जिससे साधुधर्म में निश्चल हो गया x जातिमद से जैन साधुओं पर जुगुप्सा रखता है x उसने स्वजनों को प्रतिबोध दिया, सभी जैन बने x उसकी पत्नी दीक्षा छोड़ाने का प्रयत्न करती है किंतु वह नहीं छोड़ता x एक दिन वह कुछ जादू-टोना करती है, जिससे वह साधु मर जाता है x देव बनता है x दुःखी होकर पत्नी दीक्षा लेती है x आलोचना किए बिना मरकर देवी बनती है x वह ब्राह्मण जुगुप्सा के कारण राजगृह नगर में धनसार्थवाह की चिलाति दासी का पुत्र बना x देवी धन सार्थवाह की पुत्री सुंसुमा x चिलातिपुत्र उसे पीड़ा पहुँचाता है x धन उसे घर से निकाल देता है x वह पल्ली में पहुँचता है, पल्लीपति सेवा से प्रसन्न होकर उसे पल्लीपति बनाता है x वह चोरों को कहता है राजगृही में धन सा. के यहाँ से पुत्री लाना, पुत्री मेरी, धन तुम्हारा। x सब जाते हैं x धन सा. 5 पुत्र और राजा के सैनिकों के साथ पीछा करता है x धन सैनिकों को कहता है कि तुम उससे मेरी पुत्री और धन छुड़ा लो, पुत्री मेरी, पैसा तुम्हारा x सैनिक जल्दी दौड़कर उनके पास पहुँचते हैं, चोर धन छोड़कर भाग जाते हैं, सैनिक धन लेकर चले जाते हैं x धन सा. अकेला पीछा करता है x चिलातिपुत्र सुंसुमा का सिर काट देता है और भाग जाता है x जंगल में एक मुनि मिले x मुनि को कहा धर्म कहो नहीं तो सिर उड़ा दूँगा x मुनि- उपशम विवेक संवर x वह चिंतन करता है x उपशम- कषायों का त्याग, विवेक- ममत्व का त्याग, संवर- इंद्रिय मन का निरोध x वह काउसग्ग करता है x चीटीं शरीर को चलनी कर देती है x $2\frac{1}{2}$ दिन बाद कालकर 8वें देवलोक में देव बनता है।

आराधना के अयोग्य - कुशील, कुशील संगी, क्रोध करने वाला, तृष्णा वाला, निदान वाला, जुआरी, विषय में आसक्त x पश्चात्ताप रहित इत्यादि (1183-1186)। अर्ह प्रतिद्वार का उपसंहार 1198।

(ii) लिंग- जिस चिह्न से आराधना के योग्य जनाय- संवेगरस से सम्यक् योगों में उद्यत- यह सामान्य लक्षण।

* श्रावक के लक्षण- शस्त्र छोड़ना, स्नान छोड़ना, शरीर प्रतिकर्म नहीं करना, निश्चित देश में रहना, अल्प उपधि, समभाव में रहना, सामायिक पौषधादि में रत, आसक्ति त्याग, संसार की असारता भाना, जैनों की वसति में रहना, कामविकारोत्पादक द्रव्यों को नहीं चाहना, परिमित और प्रासुक अन्नपान वापरना, गुरुवचन के अनुराग से रोमांचित 7 धातु

* साधु के लक्षण-1मुहपत्ती 2. रजोहरण 3. व्युत्सृष्ट शरीर 4. ~~अचेलक्य~~ आचेलक्य 5. सिर लोच।
इसके सिवाय गृहस्थत्व का त्याग, अव्यभिचारी इत्यादि।
1. मुहपत्ति- सिर के ऊपर और शरीर प्रमार्जना के लिए, मुख की हवा वि. की रक्षा के लिए, धूल की रक्षा।
2. रजोहरण- जिसमें "धूल ग्रहण न करना, पसीना ग्रहण न करना, मार्दव, सुकुमारता, हल्कापन" ये 5 गुण हो, वह रजोहरण। चलने में, खड़े रहने में, रखने में, छोड़ने में, बैठने में, सोने में, करवट बदलने वि. में प्रमार्जना।
3. व्युत्सृष्ट शरीर (ब्रह्मचर्य)- तैल चोपड़ना-न्हाना वि. त्याग, बाल-दाढ़ी वि. जमाना त्याग, दाँत मुँह नाक आँख वि. साफ करने का त्याग, मैल से लिप्त शरीर, रूक्ष शरीर, शोभा रहित, बढ़े हुए नख-रोम वि.।
4. आचेलक्य- जीर्ण-मलिन-प्रमाण युक्त-अल्प मूल्य वाले वस्त्र जीव रक्षा के लिए पहनना। ममत्व त्याग, लघुता, प्रतिलेखन अल्प हो, भय दूर होना, देह सुख में अनादर, वीर्याचार इत्यादि लाभ।
5. लोच के लाभ- सत्त्वप्रगट होना, प्रभु द्वारा कथित धर्म करने से उनका बहुमान, दुःख सहना, नारकादि के चिंतन से निर्वेद, स्वयं की परीक्षा, धर्मश्रद्धा, सुखत्याग, देह में ममत्व त्याग, भूषात्याग, निर्विकारत्व, इंद्रिय दमन।

* लोच न करने के नुकसान- जू-लिख से संक्लेश, खुजाने पर उनका संघट्टा वि.।
* विशेष से साधु और श्रावक के लिंग- गुरु की प्रसन्नता में तत्पर, थोड़े अपराध में भी बार बार आत्मगर्हा, सत्कथा सुनने की वांछा, अतिचार रहित मूलगुण सेवन में रति, पिंडविशुद्धि वि. क्रियाओं में बहुलक्ष्य, इत्यादि।
* जो गुरू पर द्वेष करता है, वह कुलवालक मुनि की तरह ~~भ्र~~ भ्रष्ट होता है- (1200-1229)

eg. कुलवालक मुनि-(1230-1320) → संगम सिंह आचार्य × एक शिष्य उच्छृंखल × गुरु उसे बार-बार शिक्षा देते हैं × एक बार गुरु उसके साथ सिद्ध शिला वंदन के पर्वत पर गए × वापस आते हुए उसने शिला फेंकी × गुरु बच गए × गुरु ने शाप दिया- तू स्त्री के कारण दीक्षा छोड़ेगा ×× चंपा में अशोकचंद्र राजा × हल्ल विहल्ल भाई कुंडल-हार-हाथी ×... वैशाली में चेटक राजा × युद्ध × सौधर्मेन्द्र-चमरेन्द्र की सहाय अशोकचंद्र को × मागधिका वेश्या × मुनि को मोदक से अतिसार ... इत्यादि × मुनिसुव्रत स्वामी का स्तूप। इस प्रकार गुरुप्रसाद लिंग विशेष से कहा गया।

(iii) शिक्षा-(1324-1588) → 3प्र. ग्रहण - आसेवन- तदुभय।

1. ग्रहण शिक्षा- ज्ञानाभ्यास रूप। *श्रावक और मुनि को जघन्य से 8 प्रवचन माता, उत्कृष्ट से मुनि को 14 पूर्व, श्रावक को सूत्र से षड्जीवनिकाय अध्ययन और अर्थ से पिण्डैषणा अध्ययन। क्योंकि 8 प्रवचन माता बिना सामायिक नहीं होती। षड्जीवनिकाय के ज्ञान बिना जीव रक्षा नहीं होती। पिंडैषणा के अर्थ बिना साधु को एषणीय अन्नपान वस्त्रादि नहीं वोरा सकते। (1325-30)

* पहले जिनवचन सूत्र से पढ़ना चाहिए, फिर अर्थ से साधु के पास सुनना चाहिए। पढ़ा हुआ श्रुत बार-बार अनुप्रेक्षा से स्थिर करना चाहिए। (1331-35)
* जिनवचन के 7 लाभ (1336-1346)

(a) आत्महित का ज्ञान- जीवादि तत्त्व जाने बिना जीव सदा पाप में प्रवृत्त होकर संसार में भटकता है। आत्म हित को जानने वाला अहित से निवृत्त होता है और हित में प्रवृत्त होता है।
(b) भावसंवर- स्वाध्याय करते मुनि 5 इंद्रिय से संवृत और 3 गुप्ति से गुप्त होते हैं। वे रागद्वेषादि अशुभभावों का संवर करते हैं।
(c) नया नया संवेग- मुनि जैसे-जैसे अतिशय रस वाले अपूर्व श्रुत को पढ़ते हैं, वैसे-वैसे नए-नए संवेग की श्रद्धा से आनंदित होते हैं।
(d) निष्कंपता- आय के उपाय को जानने वाला; तप-ज्ञान-दर्शन-चारित्र में विज्ञ और विशुद्ध लेश्या वाला जीव यावज्जीव निष्कंप- स्थिर विहार करता है।
(e) तप- 12 प्र. के तप में स्वाध्याय जैसा कोई तप नहीं है। स्वाध्याय से सभी गुप्तियों की आराधना होती है, गुप्ति आराधित होने से मृत्यु में आराधक होता है।
(f) परदेशिक- स्वयं और पर का उद्धार, आज्ञावात्सल्य, भक्ति, तीर्थ की अव्युच्छित्ति होती है।

* लोककाम- अर्थ में उपदेश बिना भी स्वयं कुशल होता है, धर्म तो ग्रहण शिक्षा बिना नहीं होता। (1347)
* जिसे ज्ञान में बहुमान नहीं है, उसकी धर्म क्रिया निष्फल ही है...। (1350-53)
* दो संग्रह नय- ज्ञान और क्रिया। ज्ञान नय- ज्ञान बिना क्रिया का फल नहीं होता।
* ज्ञान से लोक में मान सम्मान होता है।

eg. दृष्टांत- सुरेन्द्रदत्त → (1364-1423) → इंद्रपुर नगर × इंद्रदत्त राजा × 22 रानी के 22 पुत्र × एक बार मंत्रिपुत्री को देखकर राजा मोहित हुआ × विवाह किया × अंतःपुर में रखकर भूल गया × एकदा गवाक्ष में बैठी हुई उसे देख राजा के पूछने पर कंचुकी ने कहा कि यह आपकी रानी है × उसे पुत्र हुआ- सुरेंद्रदत्त × 22 पुत्र विनीत न होने से मूर्ख हुए, यह कलाकुशल ×× मथुरा नगरी × पर्वत राजा × निर्वृत्ति राजकुमारी × पूछने पर कुमारी ने कहा इंद्रदत्त का जो पुत्र राधावेध करेगा उसके साथ विवाह करूँगी × वह इंद्रपुर आई × 22 पुत्र निष्फल × सुरेंद्रदत्त pass

2. आसेवन शिक्षा → क्रियाकलाप रूप। ★ इसके बिना ग्रहण शिक्षा निष्फल।

★ आसेवन शिक्षा को सम्यक् रीति से आचरण करते की ग्रहण शिक्षा सफल।

★ गुरु प्रसाद- शुश्रूषापृच्छादि से ग्रहण शिक्षा प्राप्त होती है अन्यथा नहीं। प्राप्त हुई ग्रहण शिक्षा भी मन वचन काया से सेवन करने पर बढ़ती है और स्थिर होती है।

★ क्रिया नय → हेयोपादेय अर्थों को जानकर फल क्रिया बिना प्राप्त नहीं होता।

★ इसलिए प्रयत्न- पुरुषार्थ करना चाहिए। (1424-1446)

3. तदुभय शिक्षा → दोनों शिक्षा डोलते शंकाशील मन वाला शिष्य गुरु को पूछता है- यहाँ तत्त्व क्या है? गुरु कहते हैं- उभय शिक्षा। ★ ग्रहण- और आसेवन शिक्षा परस्पर सापेक्ष हैं।

★ क्रिया रहित ज्ञान देखते हुए पंगु जैसा है और ज्ञान रहित क्रिया दौड़ते हुए अंधे जैसी है। लंगड़ा और अंधा जब साथ में होते हैं तब नगर पहुँचते हैं।

★ दक्ष जीव ग्रहण शिक्षा से लक्षणीय भावों को जानकर आसेवना शिक्षा को लक्ष्य के अनुरूप अनुसरता है।

★ ग्रहण शिक्षा अकेली फलवान् नहीं होती- आर्य मंगु दृष्टांत → (1461-1486) * (1447-1460)

eg. आर्य मंगु → मथुरा नगरी × आचार्य मंगु × बहुत ज्ञानी, सदा शिष्यों को वाचना देने वाले × क्रियारहित भक्त बनाने वाले ×, ऋद्धि-रस-साता गारव में आसक्त × अभ्युद्यत विहार छोड़कर वहीं रहे × कालकर उसी नगर में किल्बिषीक यक्ष बने × विभंगज्ञान से पूर्वभव देखा × स्वयं के प्रमाद को धिक्कारा × स्थंडिल जाते शिष्यों को प्रतिबोध देने के लिए लंबी जीभ यक्ष प्रतिमा में दिखाते हैं × शिष्य कहते हैं जो भी यहाँ यक्ष, देव या राक्षस हो, वह प्रकट होकर बोले × यक्ष बोला- मैं तुम्हारा गुरु मंगु हूँ, तुम शिथिलाचार सेवन मत करना इत्यादि।

★ ज्ञान शून्य क्रिया भी फलवान् नहीं होती- अंगारमर्दक दृष्टांत (1488-1504)

eg. अंगारमर्दक → गर्जनपुर × विजयसेन सूरि × रात्री में उनके शिष्यों को स्वप्न आया कि एक सुअर 500 हाथी के साथ वसति में आया × सुबह 500 शिष्य के साथ रुद्रदेव आचार्य आए × गुरु वचन से वहीं वाले मुनि रात्री में अंगारों को स्थंडिल भूमि में रखकर छुप गए × प्राघुणक साधु आए और अंगारे की आवाज से तुरंत मिच्छामि दुक्कडं देकर वहाँ चिह्न कर 'सुबह देखेंगे' सोचकर वापस गए × उनके गुरु आवाज सुनकर भी अंगारों का मर्दन कर स्थंडिल गए × यह बात मुनि ने गुरु को कही × गुरु ने कहा- ये आचार्य सुअर हैं, शिष्य हाथी हैं × उनके शिष्यों को कहा तुम्हारे गुरु मोक्षाभिलाषी न होने से अभव्य हैं, अतः उन्हें छोड़ देना चाहिए। वे शिष्य देवलोक में गए × गुरु क्रिया करते हुए भी संसार में भटके।

★ उभय शिक्षा- 2 प्र. सामान्य और विशेष। सामान्य शिक्षा गृहस्थ और मुनि की समान है। विशेष के 2 प्र. गृहस्थ और यति की।

सामान्य शिक्षा (1507-22)- व्यवहार शुद्धि, जन निन्दनीय व्यापार त्याग, ज्ञान और वय से वृद्ध की सेवा, शास्त्राभ्यास, परोपकारित्व, सच्चरित वाले जन की प्रशंसा, दाक्षिण्यता, उत्तम गुणानुराग, अनुत्सुकत्व, अक्षुद्र, परलोक भीरुत्व, देव-गुरु- अतिथि पूजा, सर्वत्र क्रोध परिहार, पक्षपात रहित न्याय, असद्ग्रह त्याग, प्रीतिपूर्वक बोलना, संकट में धैर्य, संपत्ति में अनुत्तानत्व, स्वगुण प्रशंसा में लज्जा, अत्युत्कर्ष का परिहार, लज्जालुत्व, सुदीर्घदर्शित्व, अदुराराध्यत्व, जनप्रियत्व, परपीडा परिहार, संतोषसारत्व, अनवरत गुणाभ्यास। परार्थसंपादनैकरसिकत्व, प्रकृति से विनीतत्व, हितोपदेश देना, अवर्णवाद परिहार, इह-परलोक अपाय चिंतन.

गृहस्थ की विशेष शिक्षा (1524-77)- संसार को असार, आयुष्य- तारुण्य- धन को कुश बिंदु समान जानकर प्रकृति से परम संविग्न, उदारचित्त, साधर्मिक वात्सल्य- जीर्णोद्धार- पर परिवाद त्याग में यत्न करे,

श्रावक दिनकृत्य (1529-58) → सुबह उठकर नवकार गिने, घर में वीतराग प्रतिमा को संक्षेप से वंदन करे, उपाश्रय में प्रतिक्रमण करे, स्वाध्याय और नया श्रुत पढ़े, द्रव्य और भाव से पवित्र होकर घर में ही चैत्यवंदन- पूजा करे, स्वजनों के साथ देरासर जाकर विधिपूर्वक पूजा करे, उपाश्रय जाकर वंदन पूर्वक पच्चक्खाण करे, धर्म सुने, बालग्लानादि की ~~पूछना~~ पृच्छा करे, कुलक्रम लांघे बिना अनिंदित व्यापार करे, भोजनकाल में घर आकर अष्ट प्रकारी पूजा करे, मुनि को जाकर गोचरी की विनंती करे, साथ में लेकर आए, पैर प्रमार्ज कर आसन दे, संविभाग करे, वंदन पूर्वक छोड़ने जाए, जनकादि को भोजन कराकर, गौ- नौकर- अतिथि- ग्लानादि की व्यवस्था कर

नया सूत्र पढ़े, व्यापार करे। संध्या समय में घर में जिन प्रतिमा को वंदन कर, जिनभवन में पूजा कर, सामायिक प्रतिक्रमणादि करे, साधु को खामणा करे, धर्मश्रवण करे, पैर दबाए, प्रश्न पूछे, श्रावकों को उचित प्रणाम कर घर में विधि पूर्वक सोए। उत्कृष्ट से ब्रह्मचारी हो अथवा परिमाण करे, कंदर्पादि से रहित हो।
मोह के वश से अधमकृत्य में प्रवृत्त होकर मोह शांत होने पर विचारे- मोह दुःखों का मूल है, विपर्यय का मूल है, इनके वश से हित को अहित मानते हैं इत्यादि (1559-61)
1562-67→ स्त्री के प्रतिपक्ष का चिंतन। जिससे बाधा हो, उसके प्रतिपक्ष विचारे।
1569-76→ इस प्रकार उत्तरोत्तर गुण की प्राप्ति से काल पसार करे।
यति की विशेष शिक्षा (1578-82)- प्रतिदिन क्रिया।
(iv) विनय-(1588-1691)→ शिक्षा ~~बिना~~ विनय बिना सफल नहीं होती।
★ विनय 58.- ज्ञान (काले विणए बहुमाने...) दर्शन (निस्संकिय निक्कंखिय...) चारित्र (5 समिति 3 गुप्ति में प्रणिधान) तप (तपस्वी की भक्ति, तप में उद्यम) औपचारिक (कायिक- गुणाधिक को आसनदान, अभ्युत्थान, अंजलि। वाचिक- गुण प्रशंसा। मानसिक- अकुशल मन निरोध) [1590-99]
★ प्रत्यक्ष विनय- गुरु को आसनदानादि, परोक्ष- गुरु विरह में उनके द्वारा कथित विधि में प्रवृत्ति। (1600)
★ विनय की महत्ता (1601-1616)
★ विनय रहित को विद्या नहीं होती - श्रेणिक राजा का दृष्टांत (1618-1682)
eg. श्रेणिक राजा और चंडाल- राजगृह नगर × श्रेणिक राजा × सम्यक्त्वी × चेलणा रानी × अभय मंत्री और पुत्र × रानी के आग्रह से एक स्तंभ महल बनाने का काम × स्तंभ के लिए काष्ठ लेने जंगल गए × एक वृक्ष के पास अभय ने उपवास किया × वृक्ष पर रहता देव प्रसन्न हुआ- पूरा महल बना दिया- चारों ओर सभी ऋतु के फल वाला उद्यान ×× चंडाल की पत्नी को आम का दोहद × आम का अकाल × चंडाल रात्री में महलों के उद्यान के बाहर से अवनामिनी विद्या से डाली झुकाकर आम तोड़े, प्रत्यवनामिनी से डाली ऊपर करी × चोर पकड़ाता नहीं है × नगर बाहर नट आया × अभय वहाँ कथा कहता है- बसंतपुर × जीर्ण सेठ की पुत्री × विवाह नहीं हुआ × कामदेव की पूजा करती है × चोरी से फूल तोड़ती माली द्वारा पकड़ी गई × माली ~~विकार से कुछ~~ कहता है- तू पति द्वारा विवाहित हो और भोगी न हो, तब मुझे मिलने का वचन दे तो छोड़ूं × मंत्रीपुत्र से विवाह × रात को वह निकली × रास्ते में चोर-राक्षस मिले × सब उसे छोड़ देते हैं × अभय ने पूछा उसमें दुष्कर क्या × कोई कहे पति, राक्षस × चंडाल कहे- चोर × अभय ने उसे पकड़ा, उसने कबूल किया × राजा ने कहा विद्या सिखाए तो छोड़ूं × राजा सिंहासन पर विद्या सीखता है किंतु याद नहीं रहती × अभय नीचे बिठाता है तब याद रही।
(v) समाधि (1692-1793)→ विनय युक्त को भी समाधि बिना आराधना नहीं होती।
★ समाधि 29.- द्रव्य- इष्ट विषयों को भोगने से होने वाली समाधि। भाव- चित्त विजय से होती है, चित्त विजय राग द्वेष के परिहार से होता है। यहाँ भाव समाधि का अधिकार है। (1694-1700)
★ समाधिकरण में विवेक से मन को स्थिर करना चाहिए। तभी धर्म सफल। विशेष में संक्षेप आराधना वाले को। इत्यादि समाधि की महत्ता (1701-10)
★ समाधि वाले पुरुष का मन मित्र-स्त्री-स्वजनादि देखने पर भी आसक्ति से चलित नहीं होता - नमि राजर्षि दृष्टांत (~~168~~1712-1781)
eg. नमि राजर्षि- विदेह देश × मिथिला नगरी × नमि राजा × दाह ज्वर × उपाय निष्फल × रानियों द्वारा चंदन घिसना × चूड़ियों की आवाज × एक ही रखी × राजा ने सोचा- जितना संग, उतना अनर्थ; मैं निःसंग होऊंगा × जातिस्मरण × प्रत्येकबुद्ध, अकेले चले × शक्र परीक्षा (1738-76) × शक्र स्तुति।
(vi) चित्तानुशासन (1794-2041)→ चित्त विजय से उत्पन्न हुई समाधि तब स्थिर होती है, जब आराधक मन का बार-बार अनुशासन करता है। इसलिए समाधि वाला व्यक्ति चित्त का अनुशासन करे।
★ 1798-1978 तक मन को समझाने की प्रक्रिया। अलग-अलग उपमाओं से कषाय, विषय, भोगों से मन को हटाना।
★ जो रोज चित्तानुशासन नहीं करता, वह हित को अहित मानता हुआ पापस्थानों का सेवन करता है-
eg. वसुदत्त कथा (1983-2032)→ उज्जयनी × शूर तेज राजा × सोमप्रभ पुरोहित × विद्वान् × मरा गया × उसका पुत्र वसुदत्त अनपढ़ × पाटलीपुत्र गया × सब विद्या पढ़ा × राजा ने पुरोहित बनाया × मित्र के साथ नाटक देखने गया × रास्ते में एक युवति नर को कहती है कि मेरा मूढ़ पंडित पति नाटक देखने गया है, तब तक हम क्रीड़ा करे × सुनकर वह मन से सोचता है कि यह मेरी पत्नी है × मारने दौड़ा तब तक वह युवति चली गई × उसने सोचा वह घर गई × घर जाकर बाहर से आती हुई बहन को पत्नी मानकर मार डाला × इसके मित्र रोकते हैं तो उन पर आरोप करता है कि तुम भी उसका साथ देते हो × तब तक पत्नी आकर कहती है, ऐसा क्यों करते हो इत्यादि × उसने सोचा

यह तो असती के साथ शाकिनी भी है जो मुझे मोहित कर समझा रही है, उसके नाक-होंठ काट दिए x राजा नगर से निकाल देता है x अवंदेशा नगरी x तारापीठ राजा x राजा को प्रसन्न कर सूर्य ग्रहण में राज्ञा के क्षीरहारिक से क्षीर माँगता है x वह नहीं देता है तो आत्महत्या कर लेता है x नरक में गया।

(vii) अनियत बिहार (2054-2184) → अनुशासन कराता मन भी नित्यवास से आसक्ति रहित रहने में समर्थ नहीं है। इसलिए आलस छोड़कर सभी दोष को हरने वाले अनियत बिहार को करना चाहिए।

★ विशेषगुण के कांक्षी और विशुद्ध धर्मकरण में रति वाले मुनि को वसति-ग्राम-नगर-गण में अनियत बिहार करना चाहिए तथा श्रावक को भी तीर्थयात्रादि में अनियत बिहार करना चाहिए।

★ एक क्षेत्र से अन्य क्षेत्र में जाते ~~साधु और~~ साधु की विधि - सभी को मन-वचन-काया से खमाए जिससे बीच में मृत्यु हो तो वैरानुबंध न हो। यदि जाने वाले मुनि छोटे हो तो आचार्य-उपाध्याय को वंदन कर कहे कि मैं आपकी ओर से चैत्य, साधु और संघ को वंदन करूँगा। यदि बड़े हो तो सभी लघु मुनि वंदन कर कहे कि हमारी ओर से वंदन करना। फिर चैत्यों में जाकर प्रणिधान करे कि यह वंदन उनकी ओर से।

★ श्रावक की विधि - श्रावक भी सभी को खमाकर, गुरु वंदन कर, उनका संदेश लेकर ग्राम-नगरादि में धर्म स्थानों में जिनशासन की उन्नति करता हुआ दीन-अनाथ को अनुकंपा दान देता हुआ तीर्थों में जाए।

★ यदि द्रव्यक्षेत्रादि की संकीर्णता हो तो संक्षिप्त प्रणिधान करे।

★ वापस आकर साधु-श्रावक को कहे कि यहाँ-यहाँ आपकी वंदना की है। वे सुनकर प्रभु स्तुति करे। फिर वह धर्मलाभादि साधु के संदेश दे।

★ गुरु के पास आलोचना ले। प्रायश्चित्त स्वीकारे। विचारे - पापी ऐसा मैं भी गुरु द्वारा प्रायश्चित्त से शुद्ध किया गया। ये गुरु ही माता-पितादि हैं।

★ यदि बीच में ही मृत्यु हो जाए तो भी इष्ट फल की सिद्धि होती है।

eg. दुर्गतानारी दृष्टांत (2090-2131) → काकंदी पुरी x महावीर प्रभु समोसरे x लोग जाने लगे x गरीब वृद्धा के पूछने पर पता चला प्रभु पधारे x वह भी चली किंतु रास्ते में मृत x सौधर्म देवलोक में देव बनी x देव अवधिज्ञान से पूर्व भव जानकर समवसरण में आया x प्रभु ने सबको कहा यह वही वृद्धा का जीव है x सबने पूछा कैसे देव बना x प्रभु-पूजा के प्रणिधान से यह फल मिला x वहाँ से च्यवकर उत्तम कुल में मनुष्य बनेगा x इस प्रकार 8वें भव में कनकपुर में कनकध्वज राजा बनेगा x शरद् ऋतु में इन्द्र महोत्सव के लिए बाहर निकलेगा तब मेंढक → सर्प → क्रौंच पक्षी → अजगर को खाते हुए देखकर वैराग्य पाएगा दीक्षा लेकर मोक्ष जाएगा।

★ अनियत बिहार से 6 गुण -

1. दर्शन शुद्धि - जिन के कल्याणक तीर्थों के दर्शन से।
2. स्थिरकरण - संवेग प्रगट होता है।
3. भावना - चर्या - क्षुधा-तृषा, शीत, उष्ण, शय्या वि. परीषह।
4. अतिशयार्थ - अतिशय श्रुतधरों के दर्शन से सूत्र-अर्थ स्थिर होते हैं। अतिशय अर्थ प्राप्त होता है।
5. कुशलत्व - निष्क्रमण-प्रवेशादि में सामाचारी में कुशलता प्राप्त होती है।
6. क्षेत्रपरीक्षा - अलग-अलग क्षेत्र में जाने से।

★ जो रसादि गृद्धि अनियत बिहार नहीं करता, वह साधुओं द्वारा और गुणों द्वारा भी छोड़ दिया जाता है।

eg. शैलकाचार्य (2151-2179) → शैलकपुर x शैलक राजा x पद्मावती रानी x मंडुक राजकुमार x थावच्चापुत्र-सूरि के शिष्य शुकसूरि x मृगवन उद्यान x राजा ने दीक्षा ली 500 मंत्री के साथ x क्रम से आचार्य बने x शैलकपुर में आए x मंडुक राजा ने कहा रोग चिकित्सा कराऊँ x ठीक होने पर भी वहीं रहे x पंथक सिवाय सभी ने छोड़ दिया x चौमासी खामणा x आ. गुस्सा हुए x पंथक ने माफी मांगी x सूरि जागे x विहार किया x शत्रुंजय पर मोक्ष गए।

(viii) नरेन्द्र-राजा (2185-2483) → राजा को स्वयं के देश में अलग-अलग मंदिर के दर्शन से अनियत बिहार होता है क्योंकि परराज्य में जाने पर परराजा उस राजा पर या राज्य पर आक्रमण कर सकता है। राजा योग्य मंत्री को राज्य सौंपकर लोकपीड़ा न हो वैसे स्वयं के देश में ही चैत्यों को वंदन करे।

★ वसति दान का माहात्म्य 2228-2244

वसति का स्वरूप (2245-48) → मूल-उत्तरगुण प्रमाणित, स्त्री पशु पंडक दुःशील रहित, स्वाध्याय-काल-उच्चार-प्रस्रवणभूमि से युक्त, गुप्त, निरवद्य, अन्य के लिए प्रारब्ध और निष्ठित।

वसति दान के लाभ - मुनि को जो वस्त्रपात्रादि का लाभ होता है, वह लाभ भी शय्यातर को। लोक मुनि के पास आकर धर्मश्रवण, किया करते हैं। कोई सप्त व्यसन, सम्यक्त्व, देश विरति, सर्व विरति वि.

आराधना करते हैं उसका लाभ शय्यातर को। स्वाध्यायादि के घोष से वहाँ क्षुद्र उपद्रवादि शांत होते हैं और अभ्युदयादि गुण होते हैं। उभयलोक का फल।

वसतिदान के लाभ में ताराचंद्र-कुरुचंद्र दृष्टांत (2310-2474) → श्रावस्ती पुरी x आदिवराह राजा x ताराचंद्र राजकुमार x कुरुचंद्र मित्र x सौतेली माँ ने ताराचंद्र पर कामण किया x रोगी हुआ x नगर छोड़ा x सम्मेतशिखर पहुँचा x वह आत्म हत्या करने ऊपर चढ़ा x प्रभु स्तुति कर ऊपर गया x मुनि दिखे x एक विद्याधर युगल उतरा x पूछने पर कहा ये विद्याधरश्रेणि के राजा थे x तारचंद्र ने मस्तक उनके चरण पर रखा x रोग दूर हुए x ~~विद्याध~~ मुनि ने उपदेश दिया x विद्याधर ने विषादि दोषध्वंसिनी गुलिका दी x तारचंद्र ने खाई x रत्नपुर गया x मदनमंजूषा वेश्या ने बुलवाया x वहाँ रहा x माता बोली- बेटी! इस निर्धन को छोड़ दे x वेश्या नहीं मानी x उसने जहर दिया, कुछ असर नहीं x कामण किया, असर नहीं x वह दुःखी हुई x तारचंद्र के पूछने पर बोली तू थोड़ा बाहर जा, घर में सुख शोभे से जल्दी मर जाएगा x वेश्या ने कहा नहीं जाना x वेश्या की माँ बाहर गई x समुद्र तट पर बड़ा जहाज देखा x जहाज मालिक को कहा मैं रात को आऊँगी x तारचंद्र को शय्या सहित उठाकर जहाज में रख दिया x दिन में उठा तब कुरुचंद्र ने पहचाना x कुरुचंद्र रत्नपुर से श्रावस्ती जा रहा था x उसे श्रावस्ती ले गया, राजा बनाया x राजा ने विजयसेन सू. को वसति दी, धर्म सुना x पूरा नगर धर्म करता है किंतु कुरुचंद्र नहीं x राजा ने कुरुचंद्र को वसति देने कहा x आचार्य कुरुचंद्र के घर मासकल्प रहे x धर्म सुना किंतु परिणत न हुआ x राजा देव बना x कुरुचंद्र आर्तध्यान से तिर्यंच बना x फिर शिकारी बना x एकदा सार्थ के साथ साधुओं को जाते देख जातिस्मरण हुआ x अनशन कर सौधर्म देव बना। वसति दान का फल।

(ix) परिणाम (2484-3373) → पूर्वोक्त गुणगणालंकृत भी आराधना करने के लिए परिणाम बिना समर्थ नहीं है। परिणाम 2 - गृहस्थ और साधु

★ गृहस्थ के परिणाम 8 द्वार-

ⓐ इहपरभवगुणचिन्ता (2488-2529) → रात्रि के पूर्व-अपर समय विचारे - जन्म की दुर्लभता, माता-पिता, धर्म, गुरु-देव, बुद्धि-विद्या-बल का प्रकर्ष, धन भी उचित खर्च किया किंतु ~~मैं~~ पत्नी-पुत्र की आसक्ति के कारण मैं धर्माराधना नहीं करता हूँ। अत: पुत्र को कार्यभार सौंपकर मैं आराधना करूँ।

ⓑ पुत्र शिक्षा- (2530-2660) → दीक्षा की इच्छा वाला वह राजा या गृहस्थ सुबह प्रणाम करने आए पुत्र को कहे- तुझे हितशिक्षा देना आवश्यक नहीं है किंतु फिर भी देता हूँ - तू तारुण्य से विषयों में मत फँसना, कुटुंब भार धारण कर मुझे मुक्त कर, मैं संलेखना करूँगा।

★ स्वजनों के समक्ष उसे स्थापे। सभी धन उसे दे। गुप्त धन भंडार उसे बताए। कुछ धन जिनपूजा- गुरु-साधारण- साधर्मिक- बहन- पुत्री- अनुकंपा वि. के लिए खुद रखे।

★ जो पिता पुत्र को गुप्त धन नहीं बताते, वे पुत्र के कर्मबंध में निमित्त होते हैं- eg. वज्र-केशरी दृष्टांत।

eg. वज्र-केशरी दृष्टांत (2570-2656) → कुसुमस्थल नगर x धनसार श्रेष्ठी x वज्र पुत्र x विनयवती पत्नी x सेठ मरा x वज्र निर्धन हुआ x क्षेमिल मित्र के साथ वह विदेश गया x धन कमाया x धन से 8 रत्न खरीदकर निकले x मित्र की नियत बिगड़ी x उसने मिट्टी के ढेले बनाकर बांध रहा था, तब तक वज्र आ गया x घबराहट में रत्न की थैली वज्र को देकर, मिट्टी की थैली लेकर भाग गया x ? था. जाकर खोली तो पछताया एक घर में जाकर खाना मांगा x गृहिणी जिमा रही थी, तभी पति आया x 'जार' कहकर उसे पकड़वा दिया x उसे फाँसी दी किंतु फंदा टूटा x वह भागकर ~~कुसुमस्थल~~ जंगल गया x मुनि मिले x दीक्षा ली x विहार कर नगर में आया x वज्र को धर्म समझाया x श्रावक धर्म स्वीकारा x पुत्र केशरी x अंत में वज्र संलेखना करता है x पुत्र के बार-बार पूछने पर भी गुप्त धन नहीं बताता x पुत्र आर्तध्यान से तिर्यंच बना।

ⓒ काल विगमन द्वार (2660-2930)

★ पौषधशाला का स्वरूप → प्रकृति सौम्य प्रदेश में, कंदर्प-स्त्री रहित, बड़े दरवाजे, दीवाल चिकनी और सम, भूमि साफ, प्रतिलेखन-प्रमार्जना जहाँ आसान हो, तीनों काल में साधारण स्वरूप वाली, उच्चार भूमि युक्त।

★ ऐसी पौषधशाला में कभी वाचना, कभी पृच्छा, कथा, मौन, ध्यान, संलीनता वि. से काल पसार करे। समय पर गुरुभक्ति करे।

★ विशेष शक्ति हो तो प्रतिमा स्वीकारे।

★ श्रावकों की 11 प्रतिमा (2676-2712)

1. दर्शन प्रतिमा- थोड़े मिथ्यात्व को भी छोड़े। (2678-2735)

Q. सम्यक्त्वी श्रावक होने पर भी दर्शन प्रतिमा क्यों कही गई? Ans. यहाँ राजाभियोगादि का भी त्याग। धर्म बुद्धि से लौकिक स्नान दान पिंडदान संक्रान्ति हवन वि. नहीं करना। तीन संध्या में पूजा करना।

देव का लक्षण (2702) राग-द्वेष-मोह रहित।

गुरु का लक्षण (2703) शिव साधक गुण वाले, शास्त्रार्थ सम्यक् कहने वाले।

★ सम्यक्त्व बिना क्रिया, सुखभोग का त्याग, दुःख सहना भी निष्फल है - अन्धपुत्र दृष्टांत (2715-2734)

१. अंध पुत्र दृष्टांत - वसंतपुर × रिपुमर्दन राजा × अंध पुत्र और दिव्यचक्षु पुत्र × उपाध्याय ने अंध को गांधर्वादि कला और सचक्षु को धनुर्वेदादि कला सिखाई × अंध ने कहा मुझे भी युद्ध कला सिखाओ × गुरु कहे देखे बिना नहीं सीख सकते × आग्रह से सिखाई × शब्दवेधी हुआ × शत्रु आए × सचक्षु पुत्र गया × अंध पिता के रोकने पर भी गया × शत्रु सेना समझकर मौन हुई × शब्द न सुनता हुआ शत्रु द्वारा प्रहार किया गया × भाई ने जैसे तैसे बचाया।

2. व्रत प्रतिमा (2736-38) → दर्शन प्रतिमा का निरतिचार पालन कर व्रतप्रतिमा स्वीकारे। यहाँ 5 व्रत ग्रहण करे और निरतिचार पाले। धार्मिक कृत्यों में सविशेष रहे।

3. सामायिक प्रतिमा (2739-2752) → पूर्व प्रतिमा के गुण से युक्त सामायिक प्रतिमा स्वीकारे।

★ सामायिक के 5 गुण - (क) उदासीनता - जैसे तैसे भोजनशयनादि द्वारा संतोष होना।

(ख) मध्यस्थ - 'ये स्वजन, ये परजन' इस प्रकार तुच्छ चित्तवालों की बुद्धि होती है। विशाल चित्त में तो पूरा जगत् कुटुंब होता है क्योंकि हर जीव अनादि संसार में कहीं तो संबंधी रहा ही है।

(ग) संक्लेश विशुद्धि - जिनके साथ रहते हैं, उनकी भूल में भी गुस्सा न करना।

(घ) अनाकुलता - स्थान लाभ-अलाभादि सभी में हर्ष-वैमनस्य का अभाव।

(ङ) असंगता - सोने-कचरे में, मित्र-शत्रु में, सुख-दुःख में, स्तुति-निंदा में सर्वत्र समचित्त।

4. पौषध प्रतिमा (2753-4) → सामायिक प्रतिमा से युक्त अष्टम्यादि पर्वतिथि में पौषध करे।

5. प्रतिमा (2755-7) → पौषध दिनों में एक रात्रिकी प्रतिमा स्वीकारे। प्रतिमा में जिनेश्वर भ. को या स्वयं के दोषों को विचारे। स्नान न करे, दिन भोजी, कछोटा बांधे नहीं, दिन में ब्रह्मचर्य, रात्रि में प्रतिमा वाले दिन ब्रह्मचर्य, प्रतिमा सिवाय रात्रि में परिमाण करे। 5 मास।

6. ब्रह्म प्रतिमा (2758-9) → रात्रि में ब्रह्मचारी, जितमोह, अविभूष, एकांत में स्त्री के साथ न रहे। 6 मास प्रतिबद्धमन वाला, अप्रमादी, शृंगारकथादि त्यागे।

7. सचित्त वर्ज प्रतिमा (2760) → 7 मास। सचित्त आहार त्यागे।

8. आरंभत्याग प्रतिमा (2761) → स्वयं आरंभ न करे। नौकरों से कराए। 8 मास

9. प्रेष्य वर्ज प्रतिमा (2762-3) → संतुष्ट होकर पुत्र पर भार डाले। स्वयं प्रेष्य के पास भी आरंभ न कराए। लोकव्यवहारविरत, स्तोकममत्व। 9 मास।

10. उद्दिष्ट वर्ज प्रतिमा (2764-5) → स्वयं के उद्देश से कृत आहार छोड़े। क्षुर से मुंड हो या चोटी रखे। स्वजनों द्वारा पूछने पर यदि निधानादि जानता हो तो कहे। 10 मास।

11. श्रमण भूत प्रतिमा (2766-2772) → क्षुर से या लोच से मुंड, रजोहरण धारी, गोचरी जाए साधु की तरह। घर में प्रवेश करते हुए कहे कि प्रतिमा स्वीकारे हुए मुझे आहार दो। यदि कोई पूछे तो कहे कि मैं प्रतिमाधारी श्रावक हूँ।

★ प्रतिमा पूर्ण होने पर कोई दीक्षा ले या कोई गृहस्थ रहे।

★ घर में पापव्यापार से प्रायः मुक्त रहे और सामर्थ्य होने पर जिनगृहादि की प्रतिचर्या करे।

★ देवद्रव्य न हो तो साधारण द्रव्य से भी जीर्णोद्धार करे।

★ साधारण द्रव्य के 10 विषय → जिनमंदिर, जिनप्रतिमा, जिनपूजा, प्रशस्त पुस्तक, साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका, पौषधशाला, दर्शनकार्य। (2776-9)

1. मंदिर - नया भी बना सकते हैं, जीर्णोद्धार वि.। इसमें पृथ्वी वि. जीवों की हिंसा होती है किंतु उसमें सम्यग्दृष्टि श्रावक अनुकंपा रखे।

2. बिंब - (क) कहीं जिनमंदिर तो वहाँ प्रतिमा भराना।
(ख) मंदिर कहीं अनार्य वसति में हो और बिंब प्राचीन हो तो उन्हें आशातनादि के भय से जैन वसति में भेजे।

3. पूजा - कहीं मंदिर में पूजा न होती हो तो वहाँ लोगों को इकट्ठा कर उनसे पूजा कराए

4. पुस्तक - कोई महत्त्वपूर्ण श्रुत नष्ट होने की कगार पर हो, उसे स्वयं लिखे या लिखवाए। यदि सामर्थ्य न हो तो साधारण द्रव्य से लिखे या लिखवाए तथा अनेक ज्ञान भंडारों में भेजे। जो पढ़ने में होशियार साधु हैं, उन्हें दे।

5. साधु - उत्सर्ग से नवकोटि शुद्ध आहार वस्त्र पात्रादि वोहराए। अपवाद से अशुद्ध भी वोहराए। (2829-37) (2838-58)

6. साध्वी - साधु समान ही। विशेष स्त्री होने से उन्हें अपाय अधिक रहते हैं किंतु विशेष रक्षा में भी कोई अनर्थ हो तो संयम में विघ्न न हो ऐसा करे।

7. श्रावक - कोई श्रावक आर्थिक दुर्बल हो, उसमें वणिककला हो और द्रव्य नाश न करता हो तो साधारण द्रव्य में से उसे व्यवस्था दे। यदि वह पिशुन न हो, व्यसनी न हो, कलहकारी न हो तो नौकर की जगह उसे रखे।

8. श्राविका - श्रावक जैसा ही। (2859-79)

9. पौषधशाला (2880-2901) → पौषधशाला श्रावकों की एक-एक भी होती है और साधारण भी। वहाँ कुछ काम कराना हो तो साधारण द्रव्य से करा सकते हैं। पौषधशाला में अनेक गुण होते हैं।
10. दर्शन कार्य (2902-8) → 2प्र. अप्रशस्त - प्रतिमादि में होते भंगादि से अनुबद्धों को शत्रु करना। प्रशस्त - देवादापादि कराना। दोनों में राजादि का दर्शन संभव है।
साधारण द्रव्य से ये कार्य करने का फल (2915-26)
साधारण द्रव्य यदि पक्षपात से एक ही क्षेत्र में वापरे तो उसे शासन उच्छेद का पाप (2927-29)
(d) पुत्र प्रतिबोध → दीक्षा के लिए पुत्र की अनुमति लेना। दीक्षा लेने के तर्क-वितर्क। (2931-81)
(e) सुस्थितघटना (2982-3026) → गुरु का विनयादि करना, हितशिक्षा लेना आदि।
(f) आलोचना (3027-56) → गुरु के पास आलोचना ले। दर्शनाचार-चारित्राचार, 12 व्रतादि के अतिचार।
(g) आयुः परिज्ञान (3057-3323) → गृही 2प्र. आराधना करने में समर्थ और असमर्थ। दोनों के 2-2 प्र. - नीरोग और रोगी। जो मरण के नजदीक है, वह भक्तपरिज्ञा करे।

★ मृत्युकाल जानने के उपाय-

1. देवता (3066-71) → पवित्र होकर सूर्य-चंद्र ग्रहण में एकाग्रता से 'ॐ नरवीरे ठः ठः' विद्या का 10 हजार 8 जाप करने से देवी सिद्ध होती है। 1008 जाप से अंगुठे में देवी आती है, जिसे कुमारिका कुछ भी पूछ सकती है। यह विद्या सम्यक्त्वी को विशेष सिद्ध होती है।
2 शकुन (3072-87) → स्वस्थ अथवा रोगी आयु जानने के लिए शकुन देखे
(क) स्वस्थ - देव-गुरु को प्रणाम कर पवित्र होकर प्रशस्त दिन में शकुन देखे।
- साँप, चूहे, कृमि, कीट, छिपकली, केकड़ा, उधइ, मकोड़े, जू, भमरी, धान्य के कीड़े कारण बिना अधिक हो जाएँ अथवा नमक कारण बिना विपरीत वर्ण वाला हो तो घर में झगड़ा, धननाश, रोग, मृत्यु, संकट, विदेशगमन या शून्यगृह होता है। (3074-76) (जीवों से)
- यदि कौआ कैसे भी, कहीं भी, कभी भी सोए हुए व्यक्ति की दाढ़ी चूँटता है तो मृत्यु नजदीक है। (3077)
- कौआ जिसके वाहन - शस्त्र - चप्पल - जूते - छत्र - छाया - अंग को निःशंक कूट्टन करे, उसकी मृत्यु जल्दी।
- गाय अश्रुवाले नेत्र सहित पैरों से पृथ्वी को बहुत खोदे तो उसके मालिक को रोग या मरण।
(ख) रोगी - कुत्ता दक्षिण दिशा में मुड़कर पीठ चाटे तो रोगी एक दिन में मरेगा।
- यदि छाती चाटे तो 2 दिन, पूंछ चाटे तो 3 दिन जीएगा।
- यदि कुत्ता सर्वांग संकोच कर निमित्तकाल में सोता है तो रोगी उसी समय मरा।
- यदि कुत्ता कर्णयुगल धुनाकर अंग मोड़कर धुनाता है तो रोगी मरता है।
- यदि कुत्ता विकृतशरीर वाला लार टपकाता आँख बंद कर अंग संकोचकर सोता है तो रोगी मरता है।
- यदि कौए का समूह रोगी के घर पर 3 दिशाम तक बैठे तो रोगी मरेगा।
- कौए जिसके शयन या रसोड़े में चर्म, रस्सी, बाल या हड्डी छोड़ते हैं, वह मरता है।
3. उपश्रुति (3088-3105) → प्रशस्त दिन लोगों के सोने के समय आर्द्र चंदन से लेपकर आचार्य गंध से वासित होकर सूरिमंत्र या नवकार से कान को मंत्रित कर गंध अक्षत हाथ में लेकर, आयुज्ञान के लिए प्रणिधान वाले, एकाग्रचित्त वाले, कान ढंककर, स्थान से निकलकर उत्तर-ईशानादि प्रशस्त दिशा में मुख कर चंडाल-वैश्य-शिल्पि वि. के चौराहे पर अक्षत डालकर उपश्रुति शब्द का अवधारण करे।
शब्द 2प्र. - एक पदार्थान्तरव्यपदेश और दूसरा - तत्स्वरूप।
(क) पदार्थान्तरव्यपदेश - अन्य पदार्थ के कथन से संकेत करे। e.g. यह गृहस्तंभ दिन-पक्ष या मास में टूटेगा या नहीं? यह लगन जल्दी टूटेगा। यह दीप लंबेकाल तक रहने वाला है इत्यादि।
(ख) तत्स्वरूप - यह पुरुष या स्त्री नहीं जाएगा या हम नहीं जाने देंगे या इतने दिन बाद जाएगा इत्यादि। इस प्रकार कलाकुशल सुनकर काल जाने और निर्यामणादि कराए।
4. छायाद्वार (3106-22) → आयुज्ञान के लिए निष्कंप मन-नयन-काया वाला नर रोज निज छाया को देखे। धूप-दर्पण-पानी आदि में अंग से जो फले, वह छाया। (3109) वह छाया सहसा न्यूनाधिक हो तो जाने।
- यदि छाया में रस्सी गले में दिखे, तो मृत्यु।
- पीछे सूर्य हो आगे पानी में छाया में सिर न दिखे तो मृत्यु।
- जिसकी छाया न दिखे, वह 10 दिन। 2 छाया दिखे तो 2 दिन
- सूर्योदय के अंतर्मुहूर्त बाद पवित्र होकर सूर्य पीछे रखकर स्वयं को निष्कंप कर छाया देखे। यदि सभी अंग

संपूर्ण दिखे तो कुशल। यदि पैर न दिखे तो विदेश गमन। जांघ न दिखे तो रोग। गुह्य - पिता की मृत्यु। उदर - धननाश। हृदय - मृत्यु। सीधा हाथ - भाई मृत्यु। उल्टा हाथ - पुत्रमृत्यु। सिर - 6 मास में मृत्यु। सर्व अंग न दिखे तो जल्दी मृत्यु।

5. नाड़ीद्वार (3123-52) → नाड़ी 3 - वाम → इड़ा, चंद्र। दक्षिण → पिंगला, सूर्य। उभय → सुषुम्णा। स्थिर नेत्र वाले, अनित्यापार योगी को यह नाड़ी स्पष्ट प्रतीत होती है।

* $2\frac{1}{2}$ घड़ी इड़ा, $2\frac{1}{2}$ घड़ी पिंगला, बीच-बीच में थोड़ी देर सुषुम्णा नाड़ी बहती है। अथवा
6 गुरु अक्षर के उच्चार = 1 उच्छ्वास = 1 निःश्वास। 1 उच्छ्वास + 1 निःश्वास = 1 प्राण। 360 प्राण = 1 घड़ी
इस मान से 5 घड़ी इड़ा, 5 घड़ी में 6 प्राण न्यून पिंगला, 6 प्राण सुषुम्णा बहती है।

- यदि उत्तरायण दिन से शुरू कर 5 दिन तक एक सूर्य नाड़ी ही बहे तो 3 वर्ष, 10 दिन → 2 वर्ष, 15 दिन → 1 वर्ष जीएगा। 20 दिन → 6 मास, 25 दिन → 3 मास, 26 दिन → 2 मास, 27 दिन → 1 मास, 28 दिन → 15 दिन, 29 दिन → 10 दिन, 30 दिन → 5 दिन, 31 दिन → 3 दिन, 32 दिन → 2 दिन, 33 दिन → 1 दिन जीवन।
- 1 पूरे दिन सूर्य नाड़ी बहे तो घर में कुछ भी उत्पात, 2 दिन → गोत्रभय, 3 दिन → गाँव और गोत्रभय, 4 दिन → स्वस्थ योगी को भी प्राण संदेह, 5 दिन → निश्चित मृत्यु, 6 दिन → राजा को असाध्य रोग, 7 दिन → घोड़े को क्षय 8 दिन → नगर भय, 9 दिन → राजा को महाक्लेश, 10 दिन → राजा की मृत्यु, 11 दिन → तंत्रभय, 12 दिन → मंत्रीभय, 13 दिन → मंत्री भय, 14 दिन → मंडलभ्रंश, 15 दिन → सर्व लोक को महाभय।
- यही सब चंद्र नाड़ी में भी जानना।
- सूर्य नाड़ी बहने पर बिना कारण ही प्रकृति का विपर्यास होता है। जैसे → दिव्य शब्द सुनाते हैं, समुद्र की आवाज सुनाती है, आक्रोश में प्रसन्न होता है, मित्र के शब्दों में खुश नहीं होता, बुझे हुए दीपक की गंध का ग्रहण नहीं होती, उष्ण में शीतबुद्धि, शीत में उष्णबुद्धि, आँखों के आगे नीली पंक्तियाँ, मन का विह्वलत्व। इन सबमें अवश्य मरण।
- चंद्र नाड़ी बहने पर भी उद्वेग, रोग, शोक, भय, मान, मर्दनादि विपर्यय होते हैं।

6. निमित्त (3153-71) → जिसको निमित्त बिना ही दुर्गंध आए, अग्नि दिखे, करुण रोने के शब्दादि विकार दिखे तो वह 6 मास में मरता है।
- अचानक दूसरे के बालों पर धुआँ या आग दिखने पर मृत्यु।
- कुत्ता घर में सहसा हड्डी अथवा मृतक का अवयव लेकर प्रवेशे तो मृत्यु।
- बिना बजाए ही वाजिंत्रनाद हो अथवा बजाने पर भी शब्द न हो, बिना बादल बरसात होने से राजा की मृत्यु।
- इंद्रध्वजा, चिह्न, तोरण, द्वारस्तंभ, इन्द्रकील आदि के सहसा भंग → राजा की मृत्यु।
- अकाल में फूल-फल हो, अथवा सुंदर वृक्षों पर सहसा अग्नि या धुआँ दिखे → राजा की मृत्यु।
- रात में या बिना बादल के आकाश में दिन में इंद्रधनुष दिखे → मृत्यु।
- आकाश में गीत-वाजिंत्र के शब्द सुनाए तो ध्रुवरोग या मरण।
- हवा की गति या स्पर्श न जाने या विपरीत जाने, दो चंद्र दिखे तो मरण।
- गुदा-तालु-जिह्वादि में बिना कारण ही अतिशय मांस हो → मृत्यु।
- जिसकी जिह्वा के अग्रभाग पर काला बिंदु दिखे - 1 मास में मृत्यु।
- कारण बिना ही स्वर गिर जाए या चढ़ जाए या अतिकरुण-दीन हो - मृत्यु।
- जिसके भाल पर लंबी और चौड़ी 1, 2, 3, 4 व 5 रेखा हो - वह क्रमशः 30, 40, 60, 80, 100 वर्ष जीता है।
- जिसके अंग सर्वथा प्रकृति का त्याग कर विकार को दिखाए, पसीना हो वि. तथा उपचार से भी लाभ प्राप्त न हो वह भी मृत्यु पाएगा।

7. ज्योतिष (3172-85) → नक्षत्र और राशि के आधार पर।

8. स्वप्न (3186-3228) → विकराल आँख वाली बंदरी आलिंगन करे और बाल-नाख खींचे तो मृत्यु।
- तैल या काजल से लिप्त अंग वाला और बिखरे हुए बाल वाला नंगा स्वप्न में यदि दक्षिण दिशा में जाए तो मृत्यु।
- लाल कपड़े वाला तपस्वी दिखे या लाल कपड़े वाला गाता हो तो मृत्यु।
- जो ऊँट या गधे से युक्त यान में अकेला चढ़े और उसी समय जागे तो मृत्यु।

- काले वस्त्र या काले विलेपन वाली स्त्री यदि आलिंगन करे तो मृत्यु।
- जो पुरुष जागता हुआ ही दुष्ट स्वप्न देखता है, वह 1 वर्ष में मरता है।
- जो स्वप्न में प्रेतों के साथ शराब पीता हुआ शृगाल और कुत्तों से खींचाता है, उसे बुखार-मृ.
- वराह, गधा, कुत्ता, ऊँट, भैंसादि द्वारा दक्षिण दिशा में खेंचा जाता है, वह प्यास से मरता है।
- जिसके हृदय पर ताड़, बांस या कांटे वाली लकड़ी उगे, वह हृदय रोग से मृत्यु।
- ज्वालारहित अग्नि से जलते हुए के या मेढ़े या घी से लिप्तशरीरवाले के हृदय पर कमल खिले तो कोढ़ से मृत्यु।
- लाल कपड़े वाला या लाल फूल वाले जो पुरुष हसता हुआ स्त्रियों द्वारा खींचा जाए - पित्त से मृत्यु।
- चांडाल के साथ शराब पीए तो Diabetes से मृत्यु।
- जो स्वप्न में डूबता है वह राक्षस से मरता है।
- जो स्वप्न में पागल होता है और नाचता हुआ प्रेत द्वारा खींचा जाता है, वह पागलपन से मृ.।
- जो स्वप्न में सूर्य या चंद्र को गिरते हुए देखता है वह आँख के रोग से मरता है।
- जो सूर्य या चंद्र के ग्रहण देखता है वह बीमारी से मरता है। (3200)
- मांस खाने वाला अतिसार रोग से मरता है।
- लाल फूल वाले, मुंडित, नग्न पुरुष को चांडाल दक्षिण में ले जाए तो मृत्यु।
- जिसके सिर पर पक्षी घोंसला बनाए या कौआ, गीध वि. चढ़े या मुंड हो या प्रेत-पिशाच-स्त्री-चांडाल का संग हो या घास-बांस-कांटे वाले खड्डे अथवा श्मशान में सोए अथवा गिरे या क्षार रेती में गिरे या कीचड़ में डूबे या हरण हो या खाना हो या ठल्ले हो या भ्रमण लोह वि. की प्राप्ति हो या वल्कल से सर्व अंगों लपेटाए या झगड़ा हो या बंध हो या हार हो या देवविमान-नक्षत्र-दीपक-दांत वि. का पतन या नाश हो या हाथ-पैर-चमड़ी का पात हो या पितृलोक से भर्त्सन हो या विश्वास टूट जाए या रसोईघर-चिता-लालफूल के वन-अंधारे में प्रवेश हो या नग्न-मंद-क्षुद्र का दर्शन हो या निराहार हो या महल-पर्वत से गिरे या मछली खाए या नंगी स्त्री आलिंगन करे इत्यादि स्वप्न दिखे तो स्वस्थ भी मरता है।

★ स्वप्न 7 9.- दृष्ट श्रुत अनुभूत दोषोत्थ कल्पित प्रार्थित कर्मजनित। प्रथम 5 निष्फल, अंतिम 2 सफल
★ जो स्वप्न बहुत लंबा या छोटा हो, जो भूल गए हो, जो रात्र के पूर्व काल में देखा हो, जो कहीं भी प्रत्यक्ष देखा हो वह जल्दी फल देता है।
★ जो अतिप्रभात में देखा हो वह उसी दिन महान फल देता है
★ जो स्वप्न रात्रि के प्रथम प्रहर में देखा वह वर्ष में फल देता है।
" द्वितीय प्रहर - 3 मास। तृतीय प्रहर - 2 मास। चौथे प्रहर - 1 मास।
जो प्रभात में देखा वह 10 या 7 दिन में फलता है।
★ जो अशुभ स्वप्न देखकर शुभ देखता है तो अशुभ भी शुभ फल देता है। इस प्रकार vice versa
★ प्रभुपूजा- नवकार - तप - नियमादि से अशुभ स्वप्न मंद फल वाला होता है।

9\. रिष्ट द्वार (3229-99) → निमित्त बिना ही सहसा पुरुष की प्रकृति के विकार के अनुभव को रिष्ट कहते हैं। रिष्ट बिना पुरुष का मरण नहीं होता और रिष्ट दिखने पर जीवन नहीं होता।
- कीचड़-धूल वि. में जिसके पैर आगे या पीछे से खंडित दिखे - 8 मास।
- घी के भाजन में रोगी को सूर्य का बिंब पूर्व-दक्षिण-पश्चिम- उत्तर दिशा में खंडित दिखने पर क्रमशः 6 मास - 3 मास - 2 मास - 1 मास। रेखा छिद्र या धूएँ सहित दिखने पर 15, 2, 3, 5 दिन।
- जिसके हवा बिना के घर में जलने के अवंध्य योग होने पर भी दीपक सहसा बुझ जाए तथा जिस रोगी के घर अनिमित्त ही बर्तन अतिमात्रा में गिरे, - जल्दी मृत्यु।
- जिसे इंद्रियों से अनिमित्त ही शब्द रस रूप गंध स्पर्श की उपलब्धि न हो या विपरीत उपलब्धि हो तथा जो वैद्य या औषध को पास में लाने पर अभिनंदन नहीं करता - मृत्यु।
- जो चंद्र या सूर्य का बिंब अंजन के पुंज के प्रकाश वाला देखता है - 12 दिन।
- परिमितभक्तपानभोजी को अधिक मूत्र या पुरीष हो अथवा इसका विपरीत हो - मृत्यु।
- पूर्व में विनीत परिजन जिसके विपरीत चेष्टा करे - मृत्यु।
- जिसे गगनगंगा या दिन या तारे या सूर्य या चंद्र न दिखे।
- जिसे 1, 2 या बहुत चंद्रसूर्य या तारे में छिद्र दिखे - 1 वर्ष।
- अंगुठे से दोनों कान बंद करने पर जिसे स्वयं के कान का घोष न सुनाए - 7 दिन।

- सीधे हाथ में उल्टे हाथ की अंगुलियों के पर्व के अग्र भाग जोर से दबाने पर लाल न दिखे - मृत्यु। (3245)
- मुख-देह या घाव वि. में जिसे अत्यंत इष्ट या अनिष्ट गंध हो - मृत्यु। (3246)
- जिसके अंग अचानक बहुत मुलायम और ठंडे हो - मृत्यु।
- पसीना होने वाले घर में रोज भात देखे। यदि पसीना न हो - मृत्यु।
- जिसकी सूखी हुई विष्ठा और थूंक पानी में डूब जाए - 1 मास।
- जू या मक्खी लगातार जिसके आस-पास घूमे - मृत्यु।
- बादल न होने पर भी जिसे बिजली या इंद्रधनुष अत्यंत दिखे और गर्जनाशब्द सुनाए - मृत्यु।
- जिसके सिर पर कौआ - उल्लू वि. मांसभक्षी पक्षी सहसा गिरे - थोड़े दिन।
- जिसे चंद्र-सूर्य अचानक गिरते हुए दिखे - 12 दिन।
- जो दो सूर्य देखे - 3 मास
- सूर्य को अंतरीक्ष में घूमता देखे - मृत्यु।
- सूर्य या स्वयं के चारों दिशा में एक साथ बिंब देखे - 5 दिन अथवा 5 घड़ी।
- सर्व अंश या सूर्य में छिद्र देखे - 10 दिन।
- जो सब पदार्थ पीले देखे - 7 दिन।
- जिसे काला और भिन्न पुरीष हो - मृत्यु।
- सूर्य-चंद्र-तारों के समूह को निस्तेज देखे - 1 वर्ष। न देखे - 6 मास।
- भाल पर हाथ रखकर जो पतला मणिबंध नहीं देखता है - मृत्यु।
- आधी आँख बंद कर देखता हुआ भी स्वयं की भ्रू को न देखे - 9 दिन।
- उंगली से घिसे हैं आँख का छेद्रा जिसने, वह आँख की ज्योति न देखे - 3 दिन।
- जो स्वयं की नाक को न देखे - 5 दिन।
- मुख से बाहर निकली जीभ के अग्रभाग को न देखे - 1 दिन।
- द्रव्य भाव से पवित्र होकर तीर्थंकर की पूजा कर सीधे हाथ में कनिष्ठा उंगली के नीचे-मध्य-ऊपर 1-6-11 आए इस प्रकार शुक्ल पक्ष की 15 तिथि कल्पे। इसी प्रकार उल्टे हाथ में कृष्ण पक्ष कल्पे। एकांत में पद्मासन लगाए, प्रशस्त योग वाला, सफेद कपड़े पहने, करकमल बंद करे। काले रंग का शून्य करकमल के बीच में एकाग्रता से ध्यान करे। करकमल खोलकर जिस तिथि पर वह काला बिंदु दिखे, वह काल है। यह ध्यान सुद 1 के दिन करना चाहिए।
- जिसके भाल, छाती या मस्तक पर बालचंद्र समान या रेखा हो जाए - 1 मास।
- जिसके सिर पर गोबर के चूर्ण के वर्ण वाला चूर्ण या धुंआ दिखे - 1 मास।
- जिसके दाँत सहसा पुष्पित, शर्कराकुल, रूक्ष या काले हो - मृत्यु।
- रोग न होने पर भी जिसके दांत सहसा गिरे या टूटे - मृत्यु।
- जीभ सूखे या काली हो या प्रमाण से अधिक या हीन हो या स्तब्ध हो - मृत्यु।
- अनिमित्त ही सतत आँख से पानी निकलने लगे - 17 दिन।
- कंठ क्षोभ में प्रहर में मृत्यु, तालुक्षोभ में 100 श्वास में मृत्यु।
- जिसकी उंगलियाँ खींचे बिना ही चीरा जाए - मृत्यु।
- अनिमित्त ही वचन स्तब्ध हो, दृष्टि नष्ट हो - 3 दिन।
- जिसे स्वयं का उल्टा कंधा न दिखे - मृत्यु।
- जिसके हाथ-पांव खींचाते हुए भी अवाज न करे, रात्रि में दिशामोह हो, अतिरिक्त वीर्य गिरे, छींक-खासी-मूत्रादि में कारण बिना ही अपूर्व शब्द हो - मृत्यु।
- जिसका शरीर नहाने पर भी पानी से गीला न हो - 6 मास।
- स्नान के बाद जिसकी छाती पहले सूखे - 15 दिन।
- जिसके रूक्ष बाल सहसा तैल लगाए की तरह स्निग्ध हो - मृत्यु।
- जिसकी भुजा संक्षिप्त दिखे, पलके निकल जाए या अंदर घुस जाए, आँखे उन्मेष-निमेष रहित हो - मृत्यु।
- जिसकी नाक कुटिल हो, बुची हो, छिद्र वाली हो - मृत्यु।
- शक्ति, शील, वायु, स्मृति, बल, बुद्धि - जिसके ये 6 निवृत्त हो - 6 मास।

- ~~चोट लगने पर जिसे अति काला और दुर्गंधी खून निकले, जिह्वा पर शूल हो, हाथ में वेदना हो~~
~~चमड़ी और बाल गिर जाए, रोम उखड़ जाए और वृद्धि न हो, हृदय में बहुत ही गर्मी, पेट में ठंडी,~~
~~लोच की वेदना अनुभव न हो - 6 दिन।~~

10. यंत्र (3299-3311) →

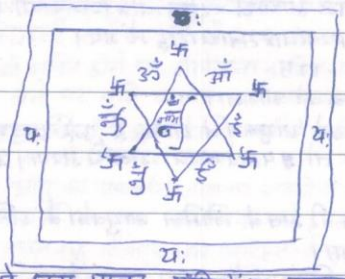

मध्य में अधिकृत व्यक्ति का नाम।

इस प्रकार का यंत्र स्वबुद्धि से हृदय, मस्तक, संधियों पर कल्पना कर सूर्योदय पर, सूर्य पीछे कर निज-छाया को देखे।

- यदि संपूर्ण दिखे - मृत्युभय नहीं है।
- कान न दिखे - 12 वर्ष। हाथ - 10 वर्ष। उंगली - 8 वर्ष। कंधे - 7 वर्ष। भुजा - 3 वर्ष। नाक - 1 वर्ष। केश - 5 वर्ष। सिर - 6 मास। गला - 1 मास। दाढ़ी - 6 मास। दृष्टि - 11 दिन। हृदय में छिद्र - 7 दिन। 2 छाया दिखे - मृत्यु।
- स्नान के बाद कान वि. अंग उपरोक्त क्रम से जल्दी सूखे तो उतने वर्ष-मास या दिन के बाद मृत्यु।

11. विद्या (3312-22) → ~~सिर~~ शिखा पर स्वा, मस्तक पर ॐ, आँख - क्षि, हृदय - पं, नाभि - हा। इस विद्या से पवित्र होकर, एकाग्रचित्त वाला, 108 बार आँखों को मंत्रित कर, सूर्योदय में स्वयं की छाया को मंत्रित कर सूर्य को पीछे कर निश्चल शरीर वाला स्वयं के लिए स्वयं की छाया, पर के लिए परछाया को उपयोग पूर्वक देखे।

- यदि छाया संपूर्ण दिखे तो 1 वर्ष तक मृत्यु नहीं है। चरण रहित - 3 वर्ष, जंघा - 2 वर्ष, जानु - 1 वर्ष, जांघ - 10 मास। कमर - 9/8 मास। पेट - 5/6 मास। गला - 4/3/2/1 मास। बगल - 15 दिन। बाहु - 10 दिन। कंधे - 8 दिन। हृदय छिद्र हो - 4 मास। सिर - 2 प्रहर। छाया न दिखे - तत्काल मृत्यु।

(8) अनशन संथारा दीक्षा द्वार (3323-46) → मृत्यु का समय जानकर श्रावक इस प्रकार भावना करे - गृहवास में नहीं रहना, इंद्रिय विषयों में आसक्ति से स्वयं को धिक्कारे, साधुओं की अनुमोदना फिर गुरु के पास जाकर दीक्षा की विनंति करे। यदि दीक्षा का मन न हो तो 12 व्रत उच्चरे। गुरु, संघादि की पूजा करे।

यदि स्वजनों का राग दूर हो जाए तो सर्व सावद्य का त्याग कर संथारा स्वीकारे। अणुव्रतधारी और दीक्षा लेने वाला संलेखना पूर्वक अनशन करे।

* साधु के परिणाम (3348-76) → स्वयं के आयुष्य, शक्ति, बलादि की तुलना कर वैराग्य दृढ़ कर अभ्युद्यत विहार या अभ्युद्यत मरण स्वीकारे।

(x) त्याग (3380-3454) → शुभ परिणाम से परिणत भी गृही या मुनि त्याग बिना आराधना करने के लिए समर्थ नहीं है। अतः त्याग द्वार।

* त्याग - 4 प्र. द्रव्य क्षेत्र काल भाव। (3381-7)

गृहस्थ को - शरीर, परिजन, उपधि वि. बहुत द्रव्य आसक्ति नहीं करने द्वारा छोड़ना - द्रव्य त्याग।
- नगर, घर वि. तो पहले ही छोड़ दिए हैं। समीहित स्थान में मूर्च्छा छोड़ना - क्षेत्र त्याग।
- शरद आदि काल में सुंदरता की बुद्धि न करे - काल त्याग।
- अप्रशस्त भाव त्याग।

मुनि को - अल्प या बहु परिकर्म की उपधि का त्याग।

* मुनि की 5 प्र. की शुद्धि - आलोचना, शय्या, उपधि, भक्तपान, वैयावृत्यकर की शुद्धि अथवा ज्ञान-दर्शन-चारित्र-विनय-आवश्यक शुद्धि।
* 5 प्र. का विवेक - इंद्रिय, कषाय, उपधि, भक्तपान, शरीर का विवेक अथवा शरीर, शय्या, संथारा, उपधि, भक्तपान, वैयावृत्य-कर (3390-92)

★ सर्वत्याग करने वाले को मृत्युसमयभी विजय प्राप्त होती है - सहस्रमल्ल दृष्टांत (3393-3440)
सहस्रमल्ल - शंखपुर × कनककेतु राजा × वीरसेन सेवक × कालसेन चोर का सीमा पर आक्रमण × सभी सामंत मौन × वीरसेन अकेला बीच में जाकर कालसेन को बांध लाया। × सहस्रमल्ल नाम पड़ा × राजा ने 1000 गाँव दिए × सुदर्शन आचार्य × दीक्षा ली × जिनकल्पी हुए × विहार कर सीमा में आए × कालसेन ने वैर से सैनिकों द्वारा मरवाया × सर्वार्थसिद्ध में गए।

(xi) मरण विभक्ति (3443-3596) → मृत्यु - 17.

1. आवीचि - प्रतिसमय आयुष्य के दलिक को भोगना।
2. अवधि - नरकादि भव के निमित्त जो आयुकर्म के दलिक हैं, उन्हें अनुभव कर अभी मरता है। यदि उन्हें ही पुनः अनुभव कर मरेगा तो पहले वाला अवधि मरण। अर्थात् पुनः वह उन गति में जाने वाला है।
3. आन्तिक (आत्यंतिक) मरण - नरकादि भव के निमित्त आयुकर्म के दलिक को भोगकर मरता है। अब कभी इस गति में नहीं आएगा।
4. वलायमरण - संयम योग से जो विषण्ण / खेद पाकर मरता है।
5. वशार्तमरण - इंद्रिय विषयों के वश में जो मरे।
6. अन्तः शल्यमरण - लज्जा या श्रुत के अभिमान से जो दुश्चरित गुरु को नहीं कहते, वे मरे।
7. तद्भव मरण - मनुष्य और तिर्यंच की आयु बांधकर मरते हुए मनुष्य या तिर्यंच का मरण।
- अकर्मभूमि के मनुष्य - तिर्यंच - नारक - देवों को छोड़कर तद्भव मरण शेष जीवों का हो सकता है।
- अवधि मरण को छोड़कर आवीचि आदि 5 मरण तद्भव मरण।
8. बाल मरण - अविरत की मृत्यु।
9. पंडित मरण - सर्व विरत की मृत्यु।
10. बाल पंडित मरण - देश विरत की मृत्यु।
11. छद्मस्थ मरण - मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्यवज्ञानी की मृत्यु।
12. केवलिमरण - केवली की मरण।
13. वैहानस मरण - फाँसी लगाना।
14. गृध्रपृष्ठमरण - गीध वि. मांसाहारी पशुओं के खा जाने से मरण।
- आगाढ उपसर्ग में, दुर्भिक्षादि में मुनि को वैहानस - गृध्रपृष्ठादि मरण की भी अनुज्ञा है।

eg. जयसुंदर - सोमदत्त मुनि दृष्टांत (3461-3523) → वैदेशा पुरी × नर विक्रमराजा × सुदर्शन सेठ × 2 पुत्र - जयसुंदर सोमदत्त × किराना लेकर अहिच्छत्रा नगर गए × जयवर्धन सेठ की 2 पुत्री सोमश्री और विजयश्री से विवाह किया × वहीं रहे × एक दिन दूत ने आकर कहा - पिता बुला रहे हैं × दोनों निकले × पहुँचे तब तक पिता मर गए × दमघोषसूरि के पास दीक्षा ली × विहार करते हुए अहिच्छत्रा में आए × भिक्षा के लिए जयसुंदर मुनि को फिरते देख सोमश्री ने बुलाया × सोमश्री असतीवृत्ति से गर्भवती थी × मुनि को दासी द्वारा घर के अंदर बुलाकर Room में लेजाकर उपसर्ग किया × मुनि ने कहा - तू Room के बाहर जा, मैं सोचकर जवाब देता हूँ × वह बाहर गई × मुनि ने दरवाजा बंद कर फांसी लगा ली × अच्युत कल्प में देव बने × नगर में बात फैलाने पर पिता ने उसे निकाल दिया × सोमश्री के स्नेह से विजयश्री भी पीछे - पीछे गई × रास्ते में सोमश्री गर्भ की पीड़ा से मरी × विजयश्री तापस के आश्रम में पहुँची × कंद-मूल खाती हुई वहाँ रहने लगी × सोमदत्त मुनि वहाँ पहुँचे × उनका पैर कील से बींधा हुआ था × विजयश्री ने उपसर्ग किया × मुनि ने देखा कि वहाँ दो राजा के युद्ध में मरे हुए सैनिकों को गीध खा रहे थे × विजयश्री जब थोड़ी दूर गई तब वे शुभध्यान पूर्वक निर्जीव की तरह वहाँ लेट गए × गीध द्वारा मर गए × जयंत विमान में देव बने।

eg. उदायि राजा (3524-44) → पाटलिपुत्र × उदायि राजा × थोड़े अपराध में ही उसने एक राजा को मारा × उस राजा का पुत्र उज्जयनी जाकर राजा को खुश करने लगा × उज्जयनी का राजा उदायि का शत्रु था × उस राजपुत्र को उज्जयनी के राजा ने सहाय दी × वह पाटलिपुत्र चाकू लेकर गया × कोई मौका नहीं मिला × अष्टमी-चतुर्दशी को आचार्य राजकुल में धर्मकथा करने जाते देख उसने दीक्षा ली × अत्यंत विनय से आचार्य खुश हुए × पौषध कराने गुरु के साथ वह चला × विनीत होने से गुरु ने मना नहीं किया × रात में चाकू से राजा को मारा × साधु होने से भागते हुए किसी ने रोका नहीं × खून की धार से भीगते हुए आचार्य राजा को मृत देख समझ गए कि उस शिष्य का यह काम है × धर्म की निंदा न हो इसलिए अनशन कर वही चाकू

स्वयं के गले में लगा दिया।
इस प्रकार आत्म हत्या भी निर्दोष कही गई है।

15. भक्तपरिज्ञा मरण (3545-62) → 'मेरे द्वारा पूर्व में अनेक प्रकार/बार खाया गया किंतु तृप्ति न हुई, इसलिए मन से विचारने से भी क्या ?' इस प्रकार समझकर यावज्जीव 4 प्र. अथवा 3 प्र. के आहार, बाह्य उपधि, आभ्यंतर परिग्रहादि सर्व त्याग करे। यह मरण सप्रतिकर्म होता है।

★ 2 प्र.- 1. सविचार - ~~जिन~~ मुनि को शक्ति होने पर संलेखना सहित यह मरण स्वीकारे।
2. अविचार - शक्ति न होने पर मुनि direct भक्त प्रत्याख्यान ले।

★ अविचार के 3 भेद - 1. निरुद्ध - शक्तिरहित ~~मुनि~~ रोग-उपसर्ग से दुर्बल शरीर वाले मुनि का। इसके भी 2 प्र. ⓐ प्रकाश - लोगों को खबर हो ⓑ अप्रकाश - गुप्त।
2. निरुद्धतर - अग्नि-व्याघ्रादि से आयु का अपवर्तन जानकर जल्दी से मुनि जब तक वचन-चित्त स्वस्थ हो, तब तक पास में रहे आचार्यादि के पास आलोचना करे।
3. परम निरुद्ध - वातादि से जब वचन रुद्ध हो जाए तब अरिहंत-सिद्धादि के पास आलोचना करे।

16. इंगिनी मरण (3562-80) → नियत भू प्रदेश में अनशन क्रिया की जाए। निष्प्रतिकर्म, 4 प्र. आहार त्याग, इंगित देशवर्ती। प्रथम 3 संघयण। गण को खमाकर, विशुद्ध स्थंडिल में तृणादि का संथारा कर उत्तर या पूर्व में सिर कर अंजलि जोड़कर अरिहंतादि की साक्षी से आलोचना कर 4 प्र. के आहार का त्याग करे। कोई उपसर्ग न हो तब स्वयं आकुंचनादि क्रिया करे। उपसर्ग हो तब निष्कंप सहन करे। कोई सचित्त में संहरण करे तो भी उपेक्षा करे। उपसर्ग शांत होने पर जयणा से स्थंडिल में जाए। सूत्र-अर्थ पोरसी में सूत्र का स्वाध्याय करे। 8 प्रहर ध्यान करे। दोनों Time आवश्यक क्रिया, पडिलेहण करे। लब्धि कार्य होने पर भी उपयोग न करे। मौन अभिग्रह। आचार्यादि के पूछने पर या देव-मनुष्य द्वारा पूछने पर धर्मकथा करे।

17. पादपोपगमन (3581-88) → वृक्ष की तरह निश्चल-निराहार रहे। नीहार करे या न भी करे। उपसर्ग में संहरण हो तो वहीं रहे।

★ भक्तपरिज्ञा - इंगिनी मरण - पादपोपगमन → सभी साधु (प्रथम संघयण सिवाय), सभी देशविरत भक्तपरिज्ञा स्वीकारते हैं। इंगिनी मरण कुछ अधिक दृढ़ बल वाले, साध्वी नहीं करती। पादपोपगमन प्रथम संघयण वाले। पादपोपगमन का 14 पूर्वों के व्युच्छेद के साथ ही व्युच्छेद, क्योंकि उसके बाद पहला संघयण नहीं होता।

(xii) प्रकृत मरण (3597-3745) → प्रकृत यानि पंडित मरण और बाल मरण। इन दोनों के 5 विकल्प -
1. पंडितपंडित मरण - तीर्थंकर का। 2. पंडित मरण - साधु का। 3. बालपंडित मरण - देशविरतों का।
4. बाल मरण - सम्यग्दृष्टि का। 5. बालबाल मरण - मिथ्यादृष्टि का।

★ अन्य आचार्य 5 विकल्प इस प्रकार कहते हैं - 1. पंडितपंडित मरण - केवली का। 2. पंडित मरण - भक्तपरिज्ञा साधु का। 3. ~~पंडित~~ बालपंडित मरण - देश विरत और अविरतों का। 4. बाल मरण - उपशम में तत्पर मिथ्यादृष्टियों का। 5. बालबाल मरण - गाढ़ मिथ्यात्वी का।

★ 3606-29 बाल और पंडित मरण का महत्त्व। पंडित मरण एक बार भी स्वर्ग-मोक्ष के सुख देता है, बाल मरण अनंत भी हो तो जीव संसार में भटकता है।

★ पंडित मरण तिर्यंच को भी वांछित फल देता है -

eg. सुंदरी-नंद दृष्टांत (3631-3709) → चंपापुरी × धन सेठ × ताम्रलिप्ती नगरी में मित्रवसु सेठ × धन सेठ ने पुत्री सुंदरी का विवाह वसु के पुत्र नंद से किया × नंद एक बार जहाज भरकर विदेश गया × सुंदरी भी साथ में × वापस आते हुए जहाज टूटा × फलक से दोनों किनारे लगे × सुंदरी - पानी बिना मैं नहीं चल सकती × नंद पानी लेने गया × सिंह ने मारा × बाल मरण से वन में बंदर बना × श्रीपुर का राजा प्रियंकर सुंदरी को ले गया × रानी बनाया × बंदर नाचने वाला हुआ × श्रीपुर में राजसभा में रानी को देख जातिस्मरण × अनशन किया × पंडित मरण से देव बना × आकर राजा और सुंदरी को प्रतिबोध किया।

★ 3710-44 पंडित मरण का माहात्म्य।

(xiii) श्रेणि (3746-3843) → श्रेणि 2 प्र. द्रव्य - महल में चढ़ने की। भाव - संयम कंडकों में चढ़ना।

★ श्रेणि में आरूढ़ वसति, उपधि वि. दोषित हो तो त्याग करता है। आचार्य के साथ कार्य होने पर बात, बाकी मौन।

★ श्रेणि में एकाग्र चित्त रहना चाहिए नहीं तो फल नहीं मिलता -

eg. स्वयंभूदत्त दृष्टांत (3754-3838) → कंचनपुर × दो भाई स्वयंभूदत्त, सुगुप्त × दुकाल पड़ा × राजा ने आज्ञा की - जिसके पास जितना धान्य हो, उसका आधा ग्रहण करो, गाय वि. के लिए × राजपुरुषों ने वैसा किया

स्वयंभूदत्त को
सार्थ के साथ दोनों भाई निकले x बीच में, किरातों ने पकड़ा x स्वयंभूदत्त छूटकर भागा x सर्प काटा x एक मुनि ने देखा x मूर्च्छित हुआ x मुनि ने सोचा - यदि दीक्षा ले तो ठीक करूँ x तभी औषधी आँख करकी x सोचा - यह अवश्य जीएगा क्योंकि दंश स्थान - नक्षत्र - तिथि विरुद्ध नहीं है x सूत्रोच्चार से ठीक किया x मुनि ने दीक्षा का कहा x भाई को देखने की बात की, फिर दीक्षा ली x गुरु के साथ रहा x अंत में, भक्त परिज्ञा स्वीकारी x तभी सुगुप्त कहीं से पहुँचा x भाई को पहचाना x रोने लगा, दीनस्वर से बुलाया x मुनि भी भाई के राग में मरे x सर्वार्थसिद्धि के योग्य कंडकों को छोड़कर सौधर्म कल्प में मध्यम आयु वाला देव बना।

★ सर्पदंश के विरुद्ध स्थान - मस्तक, लिंग, दाढ़ी, गला, गुदा, स्तन, होठ, छाती, भवां, नाभि, नाक, हाथ-पैर के तल, कंधे, बगल, आँख, ललाट, बाल के संधि देश पर डँसा हुआ मरता है। (3798-9)
विरुद्ध तिथि - 5, 6, 8, 9, 14 को डँसा हुआ पक्ष में मर सकता है। (3800)
विरुद्ध नक्षत्र - मघा, विशाखा, अश्लेषा, रोहिणी, आर्द्रा, कृत्तिका में डँसने पर 1 मुहूर्त में मरता है। (3801)
सर्प दंश के रिष्ट - कंप, लार टपकना, आँख लाल होना, जीभ लाल होना, मूर्च्छा, शरीर टूटना, गला का दुर्बल होना, क्षुधा हानि, हिचकी, शरीर ठंडा होना।

(xiv) भावना द्वार (3844-3982) → श्रेणि में चढ़ा हुआ भावना बिना स्थिर नहीं होता। अतः भावना द्वार।
भावना 2 प्र. - अप्रशस्त और प्रशस्त।

★ अप्रशस्त भावना 5 प्र. -
1. कन्दर्प भावना - 5 प्र. ⓐ कंदर्प - जोर से हँसना, कामकथा, कामोपदेश, कामप्रशंसा रूप।
ⓑ कौत्कुच्य - स्वयं न हँसते हुए आँख वि. देह अवयवों से दूसरे को हँसाना।
ⓒ द्रुतशीलत्व - अहंकार से सभी कार्य जल्दी-जल्दी करना।
ⓓ हास्यकरण - विशेषवेश या सविकार वचन से स्वयं और पर को हँसाना।
ⓔ परविस्मय जनन - स्वयं अविस्मित रहकर इंद्रजालादि से दूसरों को विस्मित करना।
2. किल्बिषिक भावना - 5 प्र. ⓐ श्रुतज्ञान निंदा - पुनरुक्ति दोष वाला इत्यादि।
ⓑ केवलि निंदा - यदि उनमें प्रेम करुणा नहीं है, यह बात सत्य है तो जीवों को उपदेश क्यों देते हैं इत्यादि।
ⓒ धर्माचार्य निंदा - जात्यादि से हीलना।
ⓓ मुनि निंदा - एक क्षेत्र में रति प्राप्त नहीं करते इत्यादि।
ⓔ गाढ़ मायिता - स्वयं के भाव छुपाना।
3. अभियोगिक भावना - वशीकरण रूप 5 प्र. -
ⓐ कौतुक - अग्निहोमादि से दूसरे को वश कर भोजनादि प्राप्त करना।
ⓑ भूतिकर्म - भूति - धागा वि. से दूसरे की रक्षा कर आजीविका चलाना।
ⓒ प्रश्न - अंगुष्ठ में देव का अवतरण कर दूसरे के प्रश्न पूछना, आजीविका चलाना।
ⓓ प्रश्नाप्रश्न - स्वप्न - विद्या - घंटिका (शरीर का अंगोपांग या देवी विशेष?) - शबरी (भिल्ल जाति की स्त्री?) से दूसरों के अर्थ का निश्चय कर आजीविका चलाना।
ⓔ निमित्त - लाभ अलाभादि दूसरे को कहकर आजीविका चलाना।
4. आसुरिक भावना - असुरता प्रगट करने वाली। 5 प्र.
ⓐ विग्रहशीलत्व - नित्य कलह करने में रति।
ⓑ संसक्ततपःकर्म - आहारादि के लिए तप करना।
ⓒ निमित्त कथन - अभिमान या द्वेष से भूतकाल वि. कहना।
ⓓ निष्कृप - स्वस्थ शरीर होने पर भी चलने में त्रसादि जीवों पर दया न करना।
ⓔ निरनुकंपत्व - जीवों को अत्यंत दुःखी देख या भय से कंपते हुए देख कर भी निष्ठुर हृदय से कंपना नहीं।
5. संमोह भावना - स्व या पर को संमोह करने वाली। 5 प्र.
ⓐ उन्मार्ग देशना - सम्यग्ज्ञानादि के विपरीत देशना।
ⓑ मार्ग दूषणा - सम्यग्ज्ञानादि मोक्ष मार्ग में रहते हुए लोगों को या मार्ग को दूषित करना।
ⓒ मार्ग विप्रतिपत्ति - कुतर्क से मार्ग को दूषित कर उन्मार्ग का अनुसरण करना।
ⓓ मोह - अन्य ज्ञान, अन्य चारित्र और परतीर्थिक की ऋद्धि में जिससे जीव मुंझाय, वह मोह। क्योंकि परमार्थ से वही धर्म है इत्यादि।
ⓔ मोह जनन - सद्भाव से या कपट से अन्यकुमत में लोगों को मोह पमाड़ना।

★ जो साधु इन अप्रशस्त भावना में रहता है, वह नीच देवों में जाता है। वहाँ से वह दुर्गति में जाता है और अनंत काल भटकता है।

★ प्रशस्त भावना ५ प्र.

1. तपोभावना - ५ इंद्रियों का दमन। जो इंद्रिय सुख में आसक्त होता है, परीषह से पीड़ित होता है, परिकर्म नहीं करता है वह अंत समय में मुंझाता है।
2. श्रुतभावना - इस भावना से ज्ञान, दर्शन, तप, संयम परिणमता है। उपयोग की प्रतिज्ञा को वह सुख मानता है।
3. सत्त्वभावना - जयणा से योग को परिभावित करनेवाले के परिणाम घोर परिषह में भी नहीं गिरते ~~मानसि~~ शारीरिक-मानसिक दोनों दुःख साथ आने पर भी अतीत दुःख को सोच कर वह मुंझाता नहीं है। देवों द्वारा डराने पर भी स्थिर रहता है।
4. एकत्व भावना - इस भावना से कामभोग में, शरीर में, मन में नहीं मानता, अनुत्तर धर्म को स्पर्शता है।
5. धृतिबल भावना।

★ एकत्व भावना में पुष्पचूल दृष्टांत (3898-3912) → पुष्पपुर × पुष्पकेतु राजा × पुष्पवती रानी × जुड़वा - पुष्पचूल पुष्पचूला × घर जमाई रखा स्नेह के कारण × दीक्षा ली × देव ने उपसर्ग किया × बहन को मारते हुए बताया × एकत्व भावना से स्थिर रहे। उन्होंने महागिरि सू. का चरित्र विचारा।

★ स्थूलभद्र मुनि के गुणगान - (3913-24) → कुसुमपुर × नंद राजा × शकटाल मंत्री × स्थूलभद्र पुत्र × शकटाल विष से मरा × स्थूलभद्र ने दीक्षा ली × कोशा के वहाँ चातुर्मास..। इनके 2 शिष्य महागिरि और सुहस्ति।

★ महागिरि चरित्र (3925-79) → गण सुहस्ती सू. को सौंप कर गच्छ में ही जिनकल्प समान किया × पाटलिपुत्र × वसुभूति सेठ के घर सुहस्ती सू. ने महागिरि का विनय किया × उनका आचार सबको समझाया × अनेषणा हुई × दोनों वैदेशी नगरी गए × जीवित स्वामी को वंदन कर एलकाक्ष नगर के गजाग्रपद पर्वत पर अनशन ~~किया~~ कर महागिरि देव बने।

★ एलकाक्ष नगर की उत्पत्ति (3948-63) → पहले दशार्णपुर नगर था × एक मिथ्यादृष्टि की पत्नी श्राविका थी × एक बार शाम को पच्चक्खाण करती हुई वह निंदा से पति द्वारा कही गई कि रात को कोई भोजन तो करता नहीं है अतः पच्चक्खाण लेना व्यर्थ है। यदि पच्चक्खाण से कोई लाभ हो तो मैं भी पच्च. लूँ × उसने कहा - निवृत्ति का लाभ है × पति ने पच्च. लिया × उस देश में रही देवी ने सोचा इसका दुर्विनय दूर करूँ × देवी ने बहनरूप में दिव्य मोदकादि दिए × नियम लेने पर भी वह खाने लगा × देवी ने मुख पर प्रहार किया × आँख की दोनों गोली बाहर आ गई × श्राविका ने अपयश के भय से काउसग्ग किया × देवी ने अर्द्धरात को मारते हुए बकरे की आँख लगाई × सुबह लोक ने एलकाक्ष कहा × नगर भी 'एलकाक्ष' नाम से प्रसिद्ध हुआ ×

★ गजाग्रपद पर्वत का नामकरण (3964-77) → पहले दशार्णकूट नाम × दशार्णभद्र राजा × 500 रानी × महावीर स्वामी पधारे × राजा अभिमान से संपूर्ण ऋद्धि के साथ वंदन करने गया × शक्र ने गर्व तोड़ने के लिए ऐरावण हाथी सजाया × -

ऐरावण के 8 दाँत बनाए × प्रत्येक दाँत पर 8-8 वापी × प्रत्येक वापी में 8-8 कमल × प्रत्येक कमल की 8-8 पंखुड़ी × प्रत्येक पंखुड़ी पर 32-32 नाटक। दशार्णभद्र ने दीक्षा ली × वंदन के लिए झुकने पर ~~ह~~ ऐरावण हाथी के आगे के दो पैर के निशान पर्वत पर उत्कीर्ण की तरह हुए × इसलिए गजाग्रपद नाम पड़ा।

(XV) संलेखना द्वार (3983-4167) → सभी द्वारों में भावविशुद्धि मुख्य है। भावविशुद्धि तीव्ररागादि छूटने पर होता है × तीव्र रागादि मोह नष्ट होने पर छूटते हैं × मोह नाश देह में धातु के अपचय से होता है × अपचय तप से होता है × तप संलेखना से होता है।

★ तप तो सामान्य से पूरे जीवन में होता है किंतु अंत में विशेष किया जाता है।

★ संलेखना साधु या श्रावक द्वारा दुःसाध्य व्याधि में, उपसर्ग में, दुर्भिक्षादि में की जानी चाहिए।

संलेखना का महत्त्व (3992-4003)।

★ संलेखना 2 प्र. - उत्कृष्ट - 12 वर्ष। जघन्य 6 मास। अथवा द्रव्य से शरीर की। भाव से इंद्रिय कषाय की।

★ उत्कृष्ट 12 वर्ष की संलेखना - प्रथम 4 वर्ष विविध अभिग्रह से युक्त छट्ठ - अट्ठमादि तप। द्वितीय 4 वर्ष विगई त्याग। दो वर्ष एकांतरे उपवास - आयंबिल।

11वें साल के प्रथम 6 मास- परिमित आयंबिल पारणे में।
द्वितीय 6 मास- अट्ठम-दसमादि पारणे में आयंबिल।
12वें साल में कोटीसहित आयंबिल। अंतिम 4 मास- एकांतरे तेल में नमक न डालकर कुल्ले करे जिससे वायु प्रकोप न हो। (4006-15)
इसी क्रम में 6 मास तक संलेखना - जघन्य।

★ ऊपरोक्त द्रव्य संलेखना कही गई। भाव संलेखना इंद्रिय-कषाय के निग्रह रूप है।
भाव संलेखना का स्वरूप- 6 प्र. के तप से-
1. अनशन- देश या सर्व से।
2. ऊनोदरी- 2 प्र. द्रव्य से - उपकरण में अतिरिक्त उपकरण का त्याग। 1 कवल से लेकर 1 दाने तक।
~~भाव से~~ भाव से - क्रोधादि का रोज निग्रह।
3. वृत्तिसंक्षेप- गोचरी में दत्ति नियम अथवा द्रव्यादि अभिग्रह।
4. रस त्याग - ~~अंचली भूमि~~ विगई त्याग इत्यादि।, खड़े रहना
5. कायक्लेश- सूर्य के सामने, समपाद, एकपाद, वीरासन, पर्यंकासन, समपुत, गोदोहिका, उत्कटुक बैठना, दंडायत, उत्तान, अधोमुख, लकड़ी की तरह सोना, अस्नान, अकंडूयन, केशलोच, शीत-उष्ण आतापना।
6. संलीनता- वृक्षमूल, बगीचे, गुफा, ~~स्मसान~~ स्मशान, शून्यगृह, देवकुलादि उद्गमादि से परिशुद्ध, स्त्री-नपुं-पशु रहित, शीत या उष्ण, सम या असम, जहाँ स्वाध्याय-ध्यान का विघ्न न हो, वह विविक्त शय्या। ऐसी शय्या इंद्रिय का निग्रह करना।
4056-75 ~~भावना~~ इंद्रिय निग्रह की भावना।
4077-90 तक कषाय निग्रह की भावना।

★ इस प्रकार द्रव्य संलेखना और भाव संलेखना, दोनों करने वाला ही आराधना को प्राप्त करता है। जो दोनों नहीं करता वह आराधक नहीं होता, गंगदत्त दृष्टांत (4094-4162)

दृ. गंगदत्त - वत्स देश × जयवर्धन नगर × बंधुप्रिय सेठ × पुत्र गंगदत्त × रूपवान् × विवाह के दिन कन्या को हस्तमेलाप में हाथ जलने लगा × वह रोने लगी × उसने पिता को कहा × विवाह के बाद ससुराल जाने के पहले वह कोई उपाय न होने से छत से कूदकर मर गई × दूसरे विवाह में भी ऐसा ही हुआ × दुःखी होकर गुणसागर सू. के पास ~~दीक्षा ली~~ पूर्वभव पूछा × सूरि- शतद्वारनगर में श्रीशेखर राजा की तू पटरानी थी, राजा की अन्य 500 रानी थी, तूने सब रानी को मार दिया, फलतः तुझे कोई कन्या नहीं परणेगी × दीक्षा ली × अंतसमय में भक्तपरिज्ञा स्वीकारी × स्थविर ने कहा पहले संलेखना करो × वह नहीं माना × वहाँ अनंगकेतु विद्याधर राजपुत्र अनेक पत्नियों के साथ वंदन करने आया × उन्हें ~~सब~~ देख मन चंचल होने से गंगदत्त ने निदान किया कि अगले ~~भव~~ भव में मैं इसके जैसा बनूँ × 4थे देवलोक में देव बना × वहाँ से उज्जयिनी में समरसिंह राजा की सोम रानी से रणशूर पुत्र बना × रूप से मोहित होकर नगर की सभी कन्याएँ उसे देखने के लिए सभी व्यापार छोड़ देती है × सभी उससे विवाह करती है × वहाँ से वह अनंत संसार भटका।

इस प्रकार परिकर्म विधि नामक प्रथम द्वार पूर्ण हुआ। (4168)

→ गणसङ्क्रम द्वार - 10 प्रतिद्वार

(i) दिक् द्वार (4172-4240) → दिग् यानि गच्छ, जिसमें साधु समूह बताया जाता है।

★ कोई आचार्य आराधना कर अंत में संलेखना करना चाहे तो उन्हें योग्य शिष्य को आचार्य बनाना चाहिए। स्वयं के गच्छ पक्षपात बिना योग्य शिष्य देखना चाहिए अथवा स्वगच्छ में न हो तो परगच्छ में (4179)

★ आचार्यपद की योग्यता (4180-4206) → आर्यदेश-जाति-कुल-रूप-संपत् से युक्त, कलाकुशल, प्रकृति से गुणाभ्यास में नित्य रत, शांत, जनानुरागी, ~~स्व~~ के स्थान, प्रिय बोलनेवाले, गंभीर, सुविशाल शीलवाले, महापुरुषों के चरित्र में रतिवाले, निरवद्य विद्या अर्जन में उद्युक्त चित्तवाले, विकथा रहित, अमायावी, दृढ़संघयण, बुद्धिमान्, धार्मिकजन को सम्मत, बहुत देश में विहार किए हुए, बहुत देशों की भाषा जाननेवाले, दीर्घदर्शी, अक्षुद्र, लज्जालु, वृद्धानुग, विनीत, बद्धलक्ष्य, अदुराराध्य, गुणों के पक्षपाती, देशकालभावज्ञ, परहितरति, पापभीरु, अनुक्रम से स्व-पर सिद्धांत पढ़े हुए, ~~सत~~ सत्क्रिया में रत, संविग्न, लब्धिमान्, सद्ज्ञानादि

गुणों के पालक और प्ररूपक, अप्रमादी, कहने में निपुण, आदेय, प्रवचनवत्सल, मन-वचन काया से शुद्ध, द्रव्यादि की अनासक्ति में तत्पर, गुप्त-समित, जितेंद्रिय, तप त्याग युक्त, मान-विकार रहित, अनुवर्तना करने वाले, चापल्य रहित, खेद रहित सूत्रार्थ कहने वाले, दृढ़ युक्ति-हेतु देने से प्रमेय के स्थापन में पटु, तत्काल उत्तर देने में पटु, मध्यस्थ, निद्रा जीतने वाले उपसर्ग-परीषह सहने वाले, उत्सर्ग-अपवादों के योग्य समय पर सेवक इत्यादि।

★ यदि सर्वगुण युक्त कोई शिष्य न हो तो कुछ गुण रहित-बहुगुण युक्त ऐसे शिष्य को आचार्य बनाए।

★ इस प्रकार सुशिष्य को आचार्य गण को पूछकर ऋणमुक्त होने के लिए गणाधिप बनाए, गुरु-शिष्य दोनों के चंद्र श्रेष्ठ होने पर सभी ग्रह उच्चस्थान पर रहे लग्न में संघ समक्ष आचार्यपद दे।

★ जो सर्वगुण युक्त शिष्य न होने पर कुछ गुण से युक्त शिष्य को आचार्य नहीं बनाते वे गुरु स्वयं भी दुर्गति में जाते हैं - शिवभद्र सू. (4212-16).

eg. शिवभद्रसूरि - कंचनपुर × शिवभद्रसूरि × बहुत शिष्य × एकदा रात में काल जानने के लिए आकाश देखा × 2 चंद्र दिखे × एक साधु को पूछा तो उसने कहा मुझे एक ही दिखता है × स्वयं की अल्प आयु जानी × एक भी शिष्य को योग्य न जानकर सीधे ही भक्तपरिज्ञा स्वीकारी × गच्छ में सारणा-वारणादि बंद होने से शिष्य स्वच्छंद हुए × शिथिल चारित्री-प्रमादी हुए × आचार्य शिष्यों को ऐसा देख संताप करने लगे × संताप से असुरकुमार देव बने × गण भी कौतुक-मंत्रादि करता हुआ अनर्थ का भागी हुआ।

(ii) क्षामणा द्वार (4241-4312) → शिष्य को आचार्य बनाकर भी खामणा बिना सम्यक् उल्लास प्राप्त नहीं होता। अतः खामणा द्वार।

★ शांत चित्त वाले आचार्य मधुर वाणी से गण को बुलाकर इस प्रकार कहे - हे महानुभाव! साथ में रहते हुए तुम्हारा मेरे द्वारा सूक्ष्म या बादर अप्रीतिकर जो भी किया गया हो, अशन-पान-वस्त्र-अन्य कोई उपकरण विद्यमान-कल्पनीय होते हुए भी न दिया हो, दूसरे द्वारा दिया जाता निषेध किया हो, पूछते हुए को अक्षरादि सूत्र का व्याख्यान न किया हो, कठोर वचन से तर्जना की हो, विनीत हुए भी मैंने विपरीत जाना हो, गुण होने पर भी प्रशंसा न की हो, वह सब निःशल्य, निष्कषाय मैं खमाता हूँ।

★ साधु भी इस प्रकार सुनकर भक्ति-विनय वाले आँसू सहित कहे - हे स्वामि! आपके द्वारा स्वयं को क्लेश कराकर भी हम पुष्ट किए गए, गुणों में हम स्थापित किए गए; इत्यादि आपका कोई क्षमा का स्थान है ही नहीं! हमारे द्वारा आपका जो अनुचित किया गया हो, वह हम खमाते हैं। कठोर वचन से कहा हुआ हित भी हमने विपरीत लिया हो, बीच में बोलना, चुगली करना, अप्रियबोलना, उपाधि वि. को पैर लगाना इत्यादि हम खमाते हैं।

★ इस प्रकार सम्यक् खामणा करने से वैर भाव परभव में नहीं आता है। अन्यथा धर्मव्यापार निष्फल होता है - नयशील सूरि (4280-4309)

eg. नयशील सूरि × ज्ञानी, शंकाशील स्वभाव × बड़ा गच्छ × उनका एक शिष्य पर्षदा में धर्मकथा करता है × गुरु ने सोचा - मुझे छोड़कर ये लोग इसके पास क्यों जाते हैं और यह शिष्य भी स्वच्छंद है, मेरे द्वारा बहुश्रुत कैसे किया गया, मेरे द्वारा दीक्षा ली - पालन किया - गुण प्राप्त किए और अब मुझे अवगणकर पर्षदा में बैठा है, यह अनार्य है, अभी रोकना भी योग्य नहीं है क्योंकि रोकूँगा तो लोग मुझे ईर्ष्यालु समझेंगे अतः उपेक्षा ही उचित है। इस प्रकार वे द्वेष धारण करते हैं × खामणा बिना मरकर भयंकर सर्प बने × उनकी स्वाध्याय भूमि में आए × स्वाध्याय भूमि जाते हुए उस साधु को अपशकुन हुए अतः स्थविर साथ में गए × उसकी ओर दौड़ते हुए सर्प को रोका गया × कोई केवली के आने पर उन्हें पूछा × तथा सर्प से बार-बार खामणा की × सर्प को जाति स्मरण हुआ × अंतिम आराधना कर देवलोक गया।

★ क्षमा के गुण - निःशल्यता, विनय, लाघव, एकत्व, अप्रतिबंध।